Con. 3. IX-9-49

अंक 9

संख्या 9

बुधवार
10 अगस्त
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

भारतीय संविधान सभा

बुधवार, 10 अगस्त सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः नौ बजे अध्यक्ष महोदय, माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा—*(जारी)*

अनुच्छेद 260—*(जारी)*

*__अध्यक्ष:__ डॉ. अम्बेडकर।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर__ (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, कल अधिवेशन समाप्त होने के पूर्व मैं अपने माननीय मित्र पण्डित कुंजरू के उन तर्कों की चर्चा कर रहा था, जिन्हें उन्होंने अपने संशोधन के समर्थन में उपस्थित किया था। मैंने आरम्भ में यह कहा था कि सभा को अनुच्छेद 251(2) और अनुच्छेद 252 के उपबन्धों का स्मरण कराने की आवश्यकता है, ताकि उन्हें दृष्टि में रखकर माननीय सदस्य समझ सकें कि वास्तव में पण्डित कुंजरू के संशोधन का क्या आशय है।

कल मैंने जो कुछ कहा था, उसे मैं संक्षेप में दुहराऊंगा। स्थिति यह है कि जहां तक आयकर का सम्बन्ध है, उसके आगम के वितरण और बंटवारे के सम्बन्ध में यह व्यवस्था की गई है कि राष्ट्रपति उन्हें निश्चित करेगा और उत्पादन-शुल्क के वितरण और बंटवारे के सम्बन्ध में यह व्यवस्था की गई है कि वह संसद की विधि द्वारा निश्चित किया जायेगा।

इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 260 के उपबन्धों को भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है, जिनमें वित्त आयोग का वर्णन है। अनुच्छेद 260 के खण्ड (3) में यह उपबन्धित है कि वित्त-आयोग संसद की विधि के अधीन वितरित होने वाले करों के वितरण तथा बंटवारे के सम्बन्ध में ही सिफारिश नहीं करेगा, बल्कि आयकर के वितरण तथा बंटवारे के सम्बन्ध में भी सिफारिश करेगा। यदि मैं, अपने मित्र पंडित कुंजरू के आशय को ठीक समझ पाया हूं तो, मेरे विचार से, वे यह चाहते हैं कि आयकर का संग्रह, वितरण तथा बंटवारा वित्त-आयोग के अधिकार में न रहे। इतना वे अवश्य चाहते हैं कि जहां तक आयकर के प्रारम्भिक वितरण का सम्बन्ध है, राष्ट्रपति वित-आयोग से परामर्श करे और तद्नुसार कार्य करे अथवा उसकी सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात् कार्य करे, किन्तु आयकर के बंटवारे में बाद में परिवर्तन करने के सम्बन्ध में राष्ट्रपति स्वतन्त्र रूप से कार्य करे और उसे वित्त-आयोग की सिफारिशों की अपेक्षा न हो। मैं समझता हूं कि मैंने उनके संशोधन के उद्देश्य का ठीक निर्वचन किया है। इसलिये वह एक

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

साधारण प्रश्न है और बहुत सरल भी है। क्या प्रान्तों और केन्द्र के बीच आयकर के वितरण के सम्बन्ध में और आयकर के आगम के प्रान्तों के बीच बंटवारे के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को वित्त-आयोग की सिफारिशों की अपेक्षा न होनी चाहिये? मैंने जिस संशोधन का मसौदा प्रस्तुत किया है, उसमें यह उपबंधित है कि आयकर के वितरण और बंटवारे में परिवर्तन करने में राष्ट्रपति वित्त-आयोग की सिफारिशों पर विचार करेगा। मैं पण्डित कुंजरू के इस मत को समझता हूं कि यदि यह व्यवस्था की गई कि राष्ट्रपति वित्त-आयोग की सिफारिशों के आधार पर इस सम्बन्ध में निर्णय करे, तो राष्ट्रपति के हाथ बंध जायेंगे और उसे वित्त-आयोग की सिफारिशों तथा प्रान्तों की चीख-पुकार के सामने झुक जाना पड़ेगा और इसका परिणाम यह होगा कि विवश होकर वह जो कदम उठायेगा, उससे केन्द्रीय वित्त की हानि होगी। उनके समान मेरी भी यही भावना है कि वित्त के सम्बन्ध में केन्द्र को अधिक से अधिक स्वतन्त्र बनाना चाहिये, क्योंकि मेरी यह निश्चित धारणा है कि हमें संविधान में कोई ऐसी बात न रखनी चाहिये, जिससे केन्द्रीय सरकार की राजनैतिक अथवा वित्तीय स्थिति पर बुरा प्रभाव पड़े। किन्तु इस प्रश्न का एक अन्य अंग भी है। यदि सभी प्रान्त अधिक राजस्व प्राप्त करने के लिए चीख-पुकार करेंगे, तो क्या वे राष्ट्रपति को विवश न कर देंगे? वास्तव में वे ऐसा करेंगे ही। किन्तु यदि वित्त-आयोग के प्रतिवेदन में यह सिफारिश होगी कि आयकर से जो राजस्व प्राप्त हो, उसमें से प्रान्तों को अधिक धन न दिया जाये, तो मेरे विचार से उससे राष्ट्रपति को बल प्राप्त हो जायेगा और वह उनकी चीख-पुकार के सामने नहीं झुकेगा। भारत सरकार के अधिनियम की भाषा को प्रयोग करके मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि विचाराधीन अनुच्छेद के मसौदे में और प्रस्तावित संशोधन में यह अन्तर है कि पंडित कुंजरू के मतानुसार राष्ट्रपति को स्वविवेक से कार्य करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिये, किन्तु मैंने जिस मसौदे को प्रस्तुत किया है उसमें कहा गया है कि वह स्वनिर्णय से कार्य करे, जिसका अर्थ यह है कि....

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): क्या माननीय सदस्य महोदय मुझे एक बात स्पष्ट करने के लिए आज्ञा देंगे, क्योंकि मेरे विचार से सम्भवत: वे मेरे आशय को पूरी तौर से नहीं समझ पाये हैं? क्या मैं एक-दो वाक्य कह कर अपना आशय स्पष्ट कर सकता हूं? अनुच्छेद 260 के खण्ड (3) के अधीन राष्ट्रपति जिस मामले पर वित्त-आयोग की सम्मति लेना चाहे, उसे उसके पास भेज सकता है। इसलिये मैं यह नहीं चाहता कि यदि राष्ट्रपति किसी मामले पर वित्त-आयोग से परामर्श करना चाहे तो उसे उसके परामर्श से वंचित रखा जाये। मुझे केवल इस पर आपत्ति है कि चाहे, राष्ट्रपति ने वित्त-आयोग के पास कोई मामला भेजा हो या न भेजा हो, किन्तु वह यह कह ही सकता है कि केन्द्र और प्रान्तों के बीच आयकर के आगम का बंटवारा उस प्रकार नहीं हुआ है, जैसे वह होना चाहिये था और इसलिये जिस प्रतिशत धन की उसने सिफारिश की है, उसे निश्चित किया जाये। कल मैंने केवल इतना ही कहा था।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** इससे स्थिति और भी पेचीदा हो जाती है, क्योंकि यह मेरी समझ में नहीं आता कि जब तक कोई मामला वित्त-आयोग के पास न भेजा गया हो अथवा उसके विचारणीय विषयों में सम्मिलित न हो, तब तक वह सिफारिश कैसे करेगा।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** अनुच्छेद 260 के खण्ड (3) के उपखण्ड (क) के अधीन आयोग स्वयं सिफारिश कर सकता है। मेरे मित्र इस उपखण्ड का अर्थ समझने के लिए इसे पढ़ें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** "सुस्थित वित्त के हित में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को सौंपे हुए किसी अन्य विषय के बारे में।"

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** यह उपखण्ड (घ) है। क्या माननीय सदस्य महोदय अनुच्छेद 260 को तथा विशेषतः उस खण्ड को देखेंगे, जिसकी मैंने कल चर्चा की थी? अनुच्छेद 260 के खण्ड (3) के उपखण्ड (क) में कहा गया है कि–

"आयोग का वह कर्तव्य होगा कि वह संघ तथा राज्यों के बीच में करों के शुद्ध आगम का, जो इस अध्याय के अधीन उनमें विभाजित होता है या होवे, वितरण के बारे में...... राष्ट्रपति को सिफारिश करे।"

मुझे इस पर आपत्ति है। यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो खण्ड (3) के उपखण्ड (घ) के अधीन राष्ट्रपति को किसी भी मामले को वित्त-आयोग के पास उसकी सम्मति के लिये भेजने की जो शक्ति दी गई है उसमें कोई अन्तर न आयेगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं कह नहीं सकता। चाहे राष्ट्रपति आयकर के आगम का स्वविवेक से बंटवारा करे अथवा आयोग की सिफारिशों के आधार पर बंटवारा करे, स्थिति स्पष्ट है। मुझे यह प्रतीत होता है कि यदि राष्ट्रपति वित्त-आयोग की सिफारिशों का प्रमाण देकर अपने कार्य की पुष्टि करेगा तो उसकी स्थिति सुदृढ़ रहेगी। मेरे विचार से वित्त-आयोग राष्ट्रपति तक पहुंचने में उन प्रान्तों के मार्ग में रुकावट डालेगा, जो आयकर से प्राप्त राजस्व के अधिक अंश के लिए चीख-पुकार करेंगे। इसलिये मेरे विचार से मेरे मित्र श्री कुंजरू ने जो संशोधन उपस्थित किया है, उसे स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्षः** अब मुझे संशोधनों पर मत लेना है। पहले मैं संशोधन संख्या 95 को उठाता हूं, जिसे डॉ. अम्बेडकर ने उपस्थित किया था। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 260 के खण्ड (1) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखा जाये:–

(1) The President shall, within two years from the commencement of this Consitution and thereafter at the expiration of every fifth year or at such earlier time as the President considers necessary by order, constitute a finance Commission which shall consist of a Chairman and four other members to be appointed by the President."

[(1) इस संविधान के प्रारम्भ से दो वर्ष के भीतर और तत्पश्चात् प्रत्येक पंचम वर्ष की समाप्ति पर, अथवा उससे पहले ऐसे समय

[अध्यक्ष]

पर, जिसे राष्ट्रपति आवश्यक समझे, राष्ट्रपति आदेश द्वारा एक वित्त-आयोग गठित करेगा जो राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त एक सभापति और चार अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा।]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची (1) (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 95 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 260 के खण्ड (3) के उपखण्ड (क) के स्थान पर निम्नलिखित उपखण्ड रखा जाये:–

'(a) the distribution between the Union and the States of the net proceeds of taxes on income which are to be divided initially between them under this Chapter:

(aa) the allocation between the States of the respective shares of the net proceeds of taxes which are to be, or may be, divided between the Union and the States, under this Chapter;' "

[(क) संघ तथा राज्यों के बीच में आयकरों के शुद्ध आगम का, जो इस अध्याय के अधीन उन में आरम्भ में विभाजित होता है, वितरण के बारे में;

(कक) राज्यों के बीच में करों के शुद्ध आगम के सम्बंधित भागों का, जो इस अध्याय के अधीन संघ तथा राज्यों के बीच में विभाजित होते हों या होवें, बंटवारे के बारे में;]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 260 के खण्ड (3) के उपखण्ड (ख) में 'revenues of India' (भारत-राजस्व) शब्दों के स्थान पर 'Consolidated Fund of India' (भारत की संचित-निधि) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 260, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 260, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 261

(संशोधन संख्या 2949 उपस्थित नहीं किया गया।)

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 261 में 'Parliament' (संसद) शब्द के स्थान पर 'each House of Parliament' (संसद के प्रत्येक सदन) शब्द रखे जायें।"

[संशोधन संख्या 99 (सूची 1, तृतीय सप्ताह) उपस्थित नहीं किया गया।]

*__श्री एच.वी. कामत__ (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2950 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 261 में 'together with an explanatory memorandum as to the action taken thereon' (उस पर की गई कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित) शब्दों के स्थान पर 'together with such explanatory memorandum as he may think fit' (ऐसे व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित जिसे वह उचित समझें) शब्द रखे जायें।"

श्रीमान्, आपकी अनुमति से मेरे नाम से जो दूसरा संशोधन है, उसे भी मैं उपस्थित करता हूं। वह तृतीय सप्ताह की सूची 4 का संशोधन संख्या 139 है और इस प्रकार है:–

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2950 में प्रस्तावित 'each House of Parliament' (संसद के प्रत्येक सदन) 'शब्दों के स्थान पर 'each House of Parliament for such action thereon as Parliament may deem necessary' (संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष ऐसी कार्यवाही के लिये रखवायेगा जिसे संसद आवश्यक समझे) शब्द रखे जायें।"

इस संशोधन संख्या 139 में डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधनों की सूची का संशोधन संख्या 2950 भी समाविष्ट है। यदि सभा ने मेरे ये दो संशोधन स्वीकार कर लिये तो अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

"राष्ट्रपति इस अध्याय के पूर्वोत्तर उपबन्धों के अधीन वित्त-आयोग द्वारा की गई प्रत्येक सिफारिश को, ऐसे व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित जिसे वह उचित समझे, संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष ऐसी कार्यवाही के लिए रखवायेगा, जिसे संसद आवश्यक समझे।"

[श्री एच.वी. कामत]

श्रीमान्, मेरे विचार से, चूंकि यह अनुच्छेद एक महत्वपूर्ण आयोग अर्थात वित्त–आयोग के सम्बन्ध में है और अनुच्छेद 260 के पश्चात आता है, इसलिये इससे एक बड़ी असंगति उत्पन्न हो जाती है। यह अनुच्छेद हमारे संविधान के मसौदे के उन कई अनुच्छेदों में से है जिनके द्वारा राष्ट्रपति को अर्थात् कार्यपालिका को अधिकाधिक शक्ति प्रदान करने का प्रयास किया गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमसे बार–बार यह कहा गया है कि राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की मंत्रणा से कार्य करेगा। मेरी समझ में नहीं आता कि वित्त–आयोग की सिफारिशों के आधार पर जो कार्य किया जायेगा, उसका निर्णय राष्ट्रपति और उसका मंत्रिमण्डल ही क्यों करे। अनुच्छेद 260 में, जिसे सभा स्वीकार कर चुकी है, हमने संसद को वित्त–आयोग के सम्बन्ध में कुछ शक्तियां प्रदान की हैं। अनुच्छेद 260 के खण्ड (2) और (4) के अधीन संसद को आयोग के सदस्यों की अर्हताओं को तथा उसकी शक्तियों को सुनिश्चित करने का अधिकार दिया गया है। जैसा कि डॉ. अम्बेडकर और पंडित कुंजरू स्पष्ट कर चुके हैं, वित्त–आयोग राज्य का एक महत्वपूर्ण संगठन होगा। हमने वित्त–आयोग को महत्वपूर्ण शक्तियां प्रदान की है। यद्यपि विधि तथा संविधान के अनुसार वह केवल मन्त्रणा देने तथा सिफारिश करने का कार्य करेगा, किन्तु मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी संदेह नहीं है कि वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में राष्ट्रपति अथवा उसका मंत्रिमण्डल अथवा संसद के निर्णयों पर उसका बहुत प्रभाव पड़ेगा। खण्ड (3) के उपखण्ड (घ) में साधारण विषयों के सम्बन्ध में शक्तियां प्रदान की गई हैं, अर्थात ऐसे विषयों के सम्बन्ध में शक्तियां प्रदान की गई हैं, जिनका सम्बन्ध साधारणत: संघीय वित्त से है। इसके अतिरिक्त इस आयोग को केन्द्र तथा उसके एककों के बीच और संघ के विभिन्न एककों के बीच राजस्व के बंटवारे के सम्बन्ध में मन्त्रणा देने की शक्तियां दी गई है। इस महत्वपूर्ण विषय के इन विभिन्न अंगों पर विचार करने के पश्चात्, मेरे विचार से, जब तक हम संविधान में यह उपबंधित न करें कि वित्त–आयोग की सिफारिशों के आधार पर जो कार्य किया जाये, उसके सम्बन्ध में संसद का निर्णय अंतिम हो, न कि राष्ट्रपति का, तब तक हम अपने कर्तव्य का पालन न करेंगे।

एक अन्य आयोग के बारे में भी, जिसके सम्बन्ध में हम एक अनुच्छेद अर्थात अनुच्छेद 301 को स्वीकार कर चुके हैं, अर्थात् उस आयोग के सम्बन्ध में जिसे हमने पिछड़े हुए वर्गों की स्थिति की जांच करने के लिए नियुक्त किया था, मैंने इसी के समान एक तर्क उपस्थित किया था। उस समय मैंने यह कहा था कि वित्त–आयोग की सिफारिशों के आधार पर जो कार्य किया जाये, उसके सम्बन्ध में संसद को शक्ति प्राप्त हो, न कि राष्ट्रपति अथवा कार्यपालिका को। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि मेरे मित्र श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने भी मेरे ही संशोधन के समान एक संशोधन उपस्थित किया है। श्रीमान्, मुझे आशा है कि चूंकि यह एक महत्वपूर्ण विषय है, इसलिये सभा इस पर गम्भीरता से विचार करेगी और हम इसका ध्यान रखेंगे कि यदि किसी बात से संविधान की गरिमा अथवा संसद की सम्पूर्ण प्रभुता पर आघात होता हो, तो कार्यपालिका को उसके सम्बन्ध में कोई ऐसी शक्तियां प्रदान न की जायें, जिनकी आवश्यकता ही न हो। आयुक्तों की अर्हतायें निश्चित करने के लिये संसद विधि बनाती है और संसद ही उन्हें शक्तियां प्रदान करती

है, किन्तु उसे किसी कार्यवाही को करने की शक्ति नहीं दी गई है और आयोग की सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रपति को ही कार्यवाही करने की शक्ति दी गई है। दुर्भाग्य से संसद के विचारार्थ उसके सामने ऐसी कार्यवाही रखी जायेगी, जो की जा चुकी होगी।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसाद__ (बिहार : जनरल): श्रीमान् स्पष्टीकरण के हेतु क्या मैं श्री कामत से पूछ सकता हूं कि मसौदे में संसद की जिस स्थिति अथवा जिन शक्तियों का वर्णन है, वह क्या सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संस्था की स्थिति तथा शक्तियां हैं, अथवा उसे केवल सीमित शक्तियां ही प्राप्त हैं?

*__श्री एच.वी. कामतः__ मुझे इसकी प्रसन्नता है कि मेरे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने विघ्न डालकर यह प्रश्न उठाया है। यदि वे अनुच्छेद को ध्यानपूर्वक देखें, तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि उसमें जिस ज्ञापन का उल्लेख है वह की हुई कार्यवाही के सम्बन्ध में है। उसमें यह नहीं कहा गया है, "जिस कार्यवाही को करने का प्रस्ताव हो"। सिफारिश के आधार पर राष्ट्रपति कार्यवाही करेगा और उसके पश्चात् उसका विवरण संसद के सामने रखा जायेगा।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ आपने यह कहा है कि संसद सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संस्था है। मैं यह कहता हूं कि संसद सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संस्था नहीं है।

*__श्री एच.वी. कामतः__ यदि संसद सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संस्था नहीं है और यदि मेरे मित्र, राष्ट्रपति को संसद के सम्बन्ध में सम्पूर्ण प्रभुत्व बनाना चाहते हैं, तो मेरा उनसे कोई झगड़ा नहीं है।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसादः__ आप मसौदे को पढ़ें और बतायें कि संसद सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न है अथवा सीमित-अधिकार-सम्पन्न।

*__श्री एच.वी. कामतः__ मैं किसी बौद्धिक वाद-विवाद में नहीं पड़ना चाहता। मैं केवल उस अनुच्छेद के सम्बन्ध में बोल रहा हूं, जो इस समय सभा के विचाराधीन है। इस अनुच्छेद में वित्त-आयोग की सिफारिशों के सम्बन्ध में संसद की तुलना में राष्ट्रपति की शक्तियों का वर्णन है। यदि हम अनुच्छेद 275 और कुछ अन्य अनुच्छेदों को देखें, तो उनमें कम से कम यह उपबन्ध मिलता है कि राष्ट्रपति की कार्यवाही का अनुमोदन संसद द्वारा होना चाहिये अन्यथा वह कार्यवाही अवैध हो जायेगी। किन्तु इस अनुच्छेद में इस प्रकार का कोई उपबन्ध नहीं है। राष्ट्रपति संसद के सामने एक ज्ञापन रखेगा जिसमें आयोग की सिफारिशों के आधार पर की हुई कार्यवाही का विवरण होगा। यह ईश्वर ही जानता है कि वह किस उद्देश्य से संसद के सामने रखा जायेगा इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा गया है कि यह ज्ञापन संसद के सामने उसके विचारार्थ रखा जायेगा या उसकी स्वीकृति अथवा अस्वीकृति के लिये।

*__पं. ठाकुरदास भार्गव__ (पूर्वी पंजाब : जनरल): केवल सूचनार्थ।

*__श्री एच.वी. कामतः__ पण्डित ठाकुरदास भार्गव कहते हैं कि वह केवल सूचनार्थ उसके सामने रखा जायेगा। यदि इस अनुच्छेद का उद्देश्य यह है, तो यह एक बहुत ही निन्दनीय अनुच्छेद है। यदि इस अनुच्छेद को इसी रूप में स्वीकार कर लिया गया, तो संसद का बिल्कुल भी आदर न किया जायेगा, उसका निरादर ही होगा। हमें अवश्य ही इस आशय का उपबन्ध रख देना चाहिये कि संसद

[श्री एच.वी. कामत]

को अस्वीकार करने की शक्ति प्राप्त होगी या नहीं अथवा वित्त-आयोग की सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रपति जो कार्यवाही करेगा, उसके सम्बन्ध में राष्ट्रपति को कौन सी शक्तियां प्राप्त होंगी। यदि इस विषय के सम्बन्ध में संसद को कोई शक्तियां प्राप्त नहीं हैं और उसका निर्णय अन्तिम निर्णय नहीं समझा जायेगा, तो मैं यह कहूंगा कि हम राष्ट्रपति को उत्तरोत्तर ऐसी शक्तियां देते जा रहे हैं, जिनकी कोई आवश्यकता नहीं है और कम से कम इस विषय के सम्बन्ध में तो कोई आवश्यकता नहीं है। चूंकि वित्त-आयोग एक महत्वपूर्ण निकाय होगा, इसलिये समाप्त करने के पूर्व मैं एक बार फिर अनुरोध करना चाहता हूं कि उसे संसद के अधीन होना चाहिये और वह इस कारण कि संसद की स्थिति एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न विधान-मण्डल की होगी। यदि राष्ट्रपति संसद के सम्मुख पहले से की हुई कार्यवाही को रखेगा और कहेगा कि "मैंने यह कार्यवाही की है" तो इससे कुछ लाभ न होगा। मेरे विचार से यह सम्पूर्ण प्रभुत्व संसद के लिये बहुत अपमानजनक होगा और इससे उसकी प्रतिष्ठा की भी हानि होगी। मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर तथा बुद्धिमान लोगों की उनकी टोली इस विषय पर ध्यानपूर्वक विचार करेगी और पहले जब अनुच्छेद 280 पर पूर्ण रूप से विचार-विमर्श हुआ था, उस दिन के समान डॉ. अम्बेडकर एक नया संशोधन लायेंगे, जिसके अधीन संसद को मूलाधिकारों के निलम्बन के सम्बन्ध में कुछ प्राधिकार प्राप्त हो जायेगा। इस आशय का एक संशोधन कार्यावली में उल्लिखित है। मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर, मसौदा-समिति तथा यह सभा इस विषय पर ध्यानपूर्वक विचार करेगी और ऐसी व्यवस्था करेगी कि वित्त-आयोग की सिफारिशों के आधार पर जो कार्य किया जाये, उस पर अंतिम रूप से संसद का ही नियंत्रण हो और वह राष्ट्रपति तथा कार्यपालिका की स्वेच्छा पर ही निर्भर न हो। श्रीमान्, मैं तृतीय सप्ताह की सूची 4 के 138 तथा 139वें संशोधनों को उपस्थित करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि उन पर गम्भीरता से विचार किया जाये।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2950 के सम्बन्ध में 'action taken thereon to be laid before Parliament' (उस पर की गई कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित, संसद के समक्ष रखवायेगा) शब्दों के पश्चात् निम्नलिखित शब्द रखे जायें:

'containing his proposals for action that should be taken thereon to be laid before each House of Parliament. The House of the People shall have the right, to amend the proposals made by the President by a resolution passed by the House of the People. The proposals of the President in their original form or in the form in which they emerge after they are amended by the House of the People shall thereafter become law.' "

(जिसमें उस पर की जाने वाली कार्यवाही के सम्बन्ध में उसके प्रस्ताव हों, जो संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखे जायें। लोक सभा को राष्ट्रपति के प्रस्तावों को एक संकल्प द्वारा संशोधित करने का अधिकार होगा, जिसे लोक सभा पारित करेगी। उसके पश्चात् राष्ट्रपति के प्रस्ताव, मूल रूप में अथवा लोक सभा द्वारा संशोधित होने पर वे जिस रूप में हों उस रूप में, विधि का रूप धारण करेंगे।)

इस संशोधन के स्वीकार होने पर अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

"राष्ट्रपति इस अध्याय के उपरोक्त उपबन्धों के अधीन वित्त आयोग द्वारा की गई प्रत्येक सिफारिश को, उस पर की गई कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित संसद के समक्ष रखवायेगा....विधि का रूप धारण करेंगे।"

पिछले अनुच्छेद पर विचार-विमर्श होते समय मैं यह कह चुका हूं कि मेरे विचार से इस अध्याय में वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में संसद के अंतिम प्राधिकार को राष्ट्रपति के प्राधिकार की तुलना में गौण स्थान दिया गया है मेरे मतानुसार इससे लोकतंत्र के सिद्धान्तों का खण्डन होता है। हम एक ऐसे वित्त आयोग को स्थापित करने जा रहे हैं, जिसे संघ और विभिन्न राज्यों के बीच राजस्व के बंटवारे के सम्बन्ध में, विभिन्न राज्यों को सहायतानुदान देने के सम्बन्ध में और संघ द्वारा किये हुये किसी करार की शर्तों में परिवर्तन करने के सम्बन्ध में तथा किसी ऐसे विषय के सम्बन्ध में भी सिफारिश करने की शक्ति होगी, जिसे राष्ट्रपति उसके सामने रखे। इस आयोग को इतनी विस्तृत शक्ति दी गई है। यह आयोग देश का दौरा करने के पश्चात् तथा पूरी वित्तीय स्थिति की जांच करने के पश्चात् राष्ट्रपति के समक्ष एक प्रतिवेदन रखेगा। मैं यह जानना चाहता हूं कि इस आयोग की सिफारिशों को स्वीकार करने अथवा अस्वीकार करने का अंतिम प्राधिकार संसद को प्राप्त होगा अथवा राष्ट्रपति को। मेरे विचार से यह एक महत्वपूर्ण विषय है और यदि इसके सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय करने का अधिकार संसद को प्राप्त न हुआ तो लोकतन्त्र के मूल पर ही आघात होगा। इसलिये मैंने इस संशोधन में यह सुझाव रखा है कि आयोग का प्रतिवेदन प्राप्त होने पर राष्ट्रपति विधान-मण्डल के सम्मुख इस आशय का एक ज्ञापन रखेगा कि उसकी सिफारिशों को कहां तक स्वीकार किया जाये और साथ ही उन सिफारिशों को स्वीकार करने अथवा अस्वीकार करने का अंतिम प्राधिकार लोक सभा को प्राप्त होगा। श्री कामत ने यह कहा है कि इस प्रकार के विधेयक पर संसद के दोनों सदन मत दें। कोई ऐसा विधेयक जो वित्त-आयोग की सिफारिशों के सम्बन्ध में होगा, धन-विधेयक होगा और उस पर लोक सभा ही मत दे सकेगी न कि उत्तर-सदन। इसी कारण मैंने उत्तर-सदन का उल्लेख नहीं किया है। मैंने यह कहा है कि लोक सभा को राष्ट्रपति के प्रस्तावों को एक संकल्प द्वारा संशोधित करने का अधिकार होगा, जिसे लोक सभा पारित करेगी। लोक सभा ही इसका निर्णय करेगी कि राष्ट्रपति के प्रस्तावों पर वित्त-आयोग की सिफारिशों को संशोधित करना आवश्यक है या नहीं। साधारणतया संसदात्मक लोकतन्त्र में प्रधानमंत्री को लोक सभा के बहुमत का विश्वास प्राप्त होगा। इसलिये राष्ट्रपति, जो भी प्रस्ताव उपस्थित करेगा, प्रधान मंत्री की मन्त्रणा

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

से उपस्थित करेगा और उसका सभा में बहुमत से समर्थन होगा। इस प्रकार उनके पारित होने में कोई कठिनाई न होगी और उन पर संसद में जो बहस होगी, उसमें विपक्षी दल को उनकी परीक्षा करने का तथा उन्हें संशोधित करने का अवसर मिलेगा और यह सरकार के समक्ष एक भिन्न दृष्टिकोण को भी रख सकेगा, जिसे सम्भवत: सरकार स्वीकार कर ले। यदि हम विपक्षी दल को संशोधन उपस्थित करने तथा प्रस्तावों की आलोचना करने का अवसर न देंगे, तो मेरे विचार से हम लोकतन्त्र को उस रूप में न चलायेंगे, जिस रूप में हम उसे स्वीकार कर चुके हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि डॉ. अम्बेडकर इस अनुच्छेद को उसके वर्तमान रूप में सभा द्वारा पारित कैसे करा सकते हैं। दो-तीन प्रसंगों को छोड़कर हर प्रसंग में वे राष्ट्रपति को ही शक्ति प्रदान करते आये हैं, जिससे उनके प्रस्ताव तर्क-विरुद्ध हो जाते हैं। मैं यह कह चुका हूं कि वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में संसद को सर्वोच्च प्राधिकार प्राप्त होना चाहिये, क्योंकि देश की सम्पन्नता वित्त के यथोचित नियंत्रण पर ही निर्भर है। मेरे विचार से मेरा संशोधन एक सीधा-सादा संशोधन है और मुझे आशा है कि सभा उसे स्वीकार कर लेगी।

*__डॉ. पी.एस. देशमुख__ (मध्यप्रांत और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि मेरे दोनों मित्र श्री कामत और प्रोफेसर सक्सेना, भ्रमग्रस्त हैं। अनुच्छेद 261 के सम्बन्ध में पहली बात यह कही जा सकती है कि उससे राष्ट्रपति को कोई अतिरिक्त शक्ति नहीं प्राप्त होती है। इस अनुच्छेद में कोई खण्ड ऐसा नहीं है। जिसके द्वारा राष्ट्रपति को सभा द्वारा अनुच्छेद 254 तथा 255 द्वारा प्रदत्त शक्ति से अधिक शक्ति प्राप्त हो जाती है। प्रोफेसर सक्सेना का यह कथन भी सही नहीं है कि वित्त-आयोग को विस्तृत शक्तियां प्राप्त हैं। उसकी शक्तियों की परिभाषा अनुच्छेद 260 के खण्ड (3) में की गई है और यह स्पष्ट है कि उसे राष्ट्रपति से केवल सिफारिशें करने की शक्ति प्राप्त है। उसे किसी कार्यवाही को करने की अंतिम शक्ति प्राप्त नहीं है, जब तक कि वह खण्ड (4) के अधीन कार्य न करे, किन्तु इस खण्ड के अधीन उसे जो शक्तियां प्राप्त होंगी वे संसद से ही प्राप्त होंगी। चूंकि वह केवल सिफारिशें करेगा, इसलिये मेरे विचार से यह कहना सही नहीं है कि वित्त-आयोग को विस्तृत शक्तियां प्राप्त हैं। यह भी नहीं कहा जा सकता है कि इस अनुच्छेद से राष्ट्रपति की शक्तियों में किसी प्रकार वृद्धि होगी। संसद के प्राधिकार को जो कुछ हानि हो सकती थी, वह अनुच्छेद 254 तथा अनुच्छेद 255 में हो चुकी है और अनुच्छेद 261 में चाहे जो कोई संशोधन किया जाये, उस हानि का निराकरण, नहीं हो सकता। किन्तु मैं यह कहना चाहता हूं कि अच्छा यह होता कि 'उस पर' शब्दों के पश्चात 'उस के द्वारा' शब्द रखे जाते, ताकि यह स्पष्ट हो जाता कि सिफारिशों के आधार पर की हुई राष्ट्रपति की कार्यवाही तथा सिफारिशें भी संसद के सामने रखी जायेंगी। इसके अतिरिक्त, अनुच्छेद की शब्दावली संतोषजनक है, क्योंकि जब संसद के सम्मुख तत्सम्बन्धी कागज रखे जायेंगे, तो वह अपनी शक्तियों के अन्दर रहते हुए उनके सम्बन्ध में संकल्प पारित कर सकेगी, अथवा सिफारिशों को अस्वीकार कर सकेगी अथवा किसी कार्यवाही को रद्द कर सकेगी। यदि हम प्रोफेसर सक्सेना और श्री कामत के संशोधनों को स्वीकार भी कर लें, तो संसद उन शक्तियों को प्रयोग नहीं कर सकती जो उसने अनुच्छेद 254 और 255 द्वारा छीन ली गई हैं। उन

शक्तियों के सम्बन्ध में संसद किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं कर सकती। किन्तु उसे जो अन्य शक्तियां प्राप्त हैं, उन्हें वह प्रयोग कर ही सकती है, जब तक कि स्पष्ट शब्दों में यह उपबन्धित न किया जाये कि ये शक्तियां उससे ले ली गई हैं इसलिये जो संशोधन प्रस्तुत किये गये हैं वे अनावश्यक हैं किन्तु साथ ही इस अनुच्छेद की वर्तमान शब्दावली, मेरे विचार से उतनी अच्छी नहीं है जितनी अच्छी वह होनी चाहिये। यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिये था कि अनुच्छेद 254 के अधीन जो विषय आते हैं, उनके अतिरिक्त तथा उन विषयों के अतिरिक्त जिन पर संसद विचार नहीं कर सकती है, वह आयोग की सिफारिशों के आधार पर जो भी कार्यवाही करना चाहे कर सकती है। इसके अतिरिक्त मेरे विचार से इस खण्ड को स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती।

मुझे विश्वास है कि उद्देश्य यही है कि सिफारिशें तथा राष्ट्रपति की कार्यवाही का विवरण भी संसद के सामने रखा जाये, किन्तु वित्त के ऐसे वितरण के सम्बन्ध में जिसे राष्ट्रपति स्वविवेक से कर सकता है, तथा संचित-निधि पर भारित ऐसे व्ययों के सम्बन्ध में, जो अनुच्छेद 255 में उपबंधित हैं, संसद हस्तक्षेप नहीं कर सकती है इसलिये मेरे विचार से केवल यह कहना मतलब नहीं रखता है कि संसद उन शक्तियों का प्रयोग करेगी, जो उसे प्राप्त हैं और जो उससे छीनी नहीं गई हैं। इसलिये मैं नहीं समझता कि इस अनुच्छेद को संशोधित करने की आवश्यकता है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** श्रीमान्, श्री कामत और श्री सक्सेना के संशोधनों में जो सिद्धांत सन्निहित है, उसका मैं समर्थन करता हूं। अनुच्छेद 261 के सम्बन्ध में यह कहा गया है कि संसद के समक्ष व्याख्यात्मक ज्ञापन रखा जायेगा किन्तु यदि आप कृपा करके इस अनुच्छेद की शब्दावली को देखें तो आपको ज्ञात हो जायेगा कि व्याख्यात्मक ज्ञापन में वित्त-आयोग की सिफारिशें सम्मिलित न होंगी, बल्कि वह केवल उनके आधार पर की हुई कार्यवाही के सम्बन्ध में होगा। उन पर की गई कार्यवाही का केवल यह अर्थ हो सकता है कि इन सिफारिशों के सम्बन्ध में राष्ट्रपति ही अंतिम रूप से निर्णय करेगा और वही उन्हें स्वविवेक से स्वीकार अथवा अस्वीकार करेगा। यह बहुत असंतोषजनक व्यवस्था है। वास्तव में अनुच्छेद 261 के आधार पर ही प्रान्त कुछ आशा बांध सकते हैं। हम अनुच्छेद 255 पर कल बहस कर चुके हैं और हमें ज्ञात है कि उसके अधीन गरीब प्रान्तों की आवश्यकताओं पर संसद विचार करेगी। अनुच्छेद 254 संक्रांति कालीन अनुच्छेद है। ये सभी विषय वित्त-आयोग के समक्ष रखे जायेंगे, जो पहले दो वर्ष के अन्दर स्थापित किया जायेगा और फिर प्रत्येक पांच वर्ष के पश्चात् स्थापित किया जायेगा। वित्त-आयोग दिन प्रतिदिन के कार्यों के सम्बन्ध में प्रस्ताव नहीं उपस्थित करेगा। वह खूब विचार करने के पश्चात् प्रस्ताव उपस्थित करेगा, क्योंकि उनसे प्रान्तों के भाग्य का निर्णय होगा। वित्त आयोग की सिफारिशों पर ही प्रान्तों की उन्नति निर्भर रहेगी। प्रान्तों को यही आशा है कि वित्त आयोग पर किसी प्रकार का संदेह न किया जा सकेगा और वह उनकी सभी आवश्यकताओं पर विचार करेगा। उसने अनुच्छेद 262 (2) में यहां तक उपबंधित किया है कि संसद ही उसके पांच सदस्यों की अर्हताओं को निश्चित करेगी। मेरा यह निवेदन है कि वित्त-आयोग का प्रतिवेदन एक ऐतिहासिक अभिलेख होगा और उसी पर ऐसे सब प्रस्ताव आधृत होंगे, जिनका प्रान्तों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। इसलिये प्रान्तों को इस विषय पर

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

संसद में अपने प्रतिनिधियों द्वारा अपनी सम्मति प्रकट करने का अवसर मिलना चाहिये। यदि मंत्रिमण्डल तथा राष्ट्रपति ही वित्त-आयोग की सिफारिशों पर निर्णय करेंगे तो, मेरे विचार से, प्रान्तों का उस पर विश्वास न रह पायेगा। वित्त-आयोग स्थापित होने के पश्चात् प्रत्येक पांच या छह वर्ष में—क्योंकि एक वर्ष उसे प्रतिवेदन उपस्थित करने में लग जायेगा—जांच करेगा। यह आवश्यक है कि इतना महत्वपूर्ण विषय अवश्य ही संसद के सम्मुख रखा जाये और वही उसके सम्बन्ध में अंतिम निर्णय करे।

संसद के सम्बन्ध में, मेरे विचार से प्रोफेसर सक्सेना के संशोधन में सन्निहित सिद्धान्त बहुत ही उपयुक्त सिद्धांत है। संविधान के अन्य उपबन्धों के अधीन वित्त-सम्बन्धी सभी विषयों के बारे में लोक सभा ही अन्तिम निर्णय कर सकती है। यह उचित ही है कि वित्त आयोग के प्रस्तावों पर संसद के दोनों सदन विचार करें, किन्तु वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में अंतिम निर्णय करने का अधिकार लोक सभा को ही प्राप्त हो। इसलिये यह आवश्यक है कि प्रस्ताव संसद के दोनों सदनों के समक्ष रखे जायें और उन पर बहस हो और इसके उपरान्त यदि कोई प्रस्ताव रखे जायें तो उनकी सिफारिश लोक सभा करे और इस प्रकार जो विधि बने उसका वहीं प्रभाव हो जो धन-विधेयकों का होता है। अभी तक इस धन-विधेयकों के सम्बन्ध में जितने भी उपबन्ध स्वीकार कर चुके हैं, वे इन प्रस्तावों के सम्बन्ध में भी प्रयुक्त हों।

डॉ. देशमुख का यह विचार है कि अनुच्छेद 261 द्वारा संसद से कोई शक्ति नहीं छीनी गई है, किन्तु उनके तर्क से मैं प्रभावित नहीं हुआ। मेरा यह नम्र निवेदन है कि यदि अनुच्छेद 261 के अधीन राष्ट्रपति को कार्यवाही करने की शक्ति प्राप्त है तो ज्ञापन से केवल सदस्यों को सूचना देने के उद्देश्य की सिद्धि होगी। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि संसद की शक्तियां छीनी गई हैं। मेरे मित्र की यह धारणा है कि कार्यवाही करने के पश्चात् जब उसका विवरण संसद के समक्ष रखा जायेगा, तो वह उस पर कदम उठा सकेगी। यह स्पष्ट है कि यह सही नहीं हो सकता। यदि यह सही भी है तो मेरे विचार से यदि ये प्रस्ताव पहले लोक सभा के समक्ष न रखे गये तो बहुत हानि होगी। जो सिफारिशें की जायेंगी उन्हें अस्वीकार करना अथवा निराकृत करना कठिन हो जायेगा। उचित यही है कि वित्त-आयोग के प्रतिवेदन पर तथा इस पूरे विषय पर विचार करने तथा इसके सम्बन्ध में कार्यवाही करने का अधिकार संसद को प्राप्त हो। मुझे यह आशंका है कि राष्ट्रपति की कार्यवाही के पश्चात् ज्ञापन केवल सूचनार्थ उपस्थित किया जायेगा और किसी कार्यवाही के लिये उपस्थित न किया जायेगा। मेरे विचार से इस उपबन्ध से संसद की वित्तीय विषयों पर विचार करने की शक्ति का अपहरण होता है और इसलिये मैं यह चाहता हूं कि श्री कामत और प्रोफेसर सक्सेना के संशोधन स्वीकार किये जायें।

***प्रो. के.टी. शाह** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, श्री कामत तथा श्री सक्सेना के संशोधनों का मैं भी समर्थन करता हूं। मैं यह बताना चाहता हूं कि वित्त-आयोग की स्थापना, शक्ति तथा कार्यवाही विषयक इस पूरे अध्याय से मैं संतुष्ट नहीं हूं। वित्त-आयोग को स्थापित करके कार्यपालिका को और भी अधिक संरक्षण की शक्ति प्रदान की गई है और जहां तक वित्त-आयोग को इस अनुच्छेद

द्वारा कार्यवाही करने की शक्ति दी गई है, वहां तक वह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संसद के अधिकारों के विरूद्ध कार्यवाही करेगा। इसे मानना सम्भव नहीं है कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न संसद को साधारणतया जो शक्ति प्राप्त होती है, उसका इस उपबन्ध से अपहरण नहीं होता है क्योंकि अनुच्छेद 261 की शब्दावली के अनुसार ज्ञापन पर विचार करने के अधिकार तथा संसद के समक्ष ज्ञापन प्रस्तुत करने के अधिकार का केवल यह अर्थ होगा कि जो कार्यवाही सम्पन्न हो चुकेगी, उसकी बाद में जांच होगी और केवल निरर्थक बहस होगी। विरोध केवल विरोध प्रदर्शन के लिये किया जायेगा और केवल दोष निकाले जायेंगे तथा कोई भी रचनात्मक सुझाव अनियमित होगा, क्योंकि वह बहस ऐसी सम्पन्न कार्यवाही पर होगी, जिसका निराकरण नहीं हो सकेगा। इससे केवल विद्वेष को व्यक्त करने का अवसर मिलेगा।

मेरे विचार से इस प्रकार के उपबन्ध से अर्थ-व्यवस्था का हित साधन नहीं हो सकता है। यह एक महत्वपूर्ण बात है कि इससे उस लोक प्रभुता का भी हित साधन नहीं हो सकता, जो इंग्लिस्तान के संविधान में राजकोष शक्ति के अधीन वर्णित है, जिसकी कि हम नकल कर रहे हैं। इन संशोधनों के प्रस्तावानुसार की जाने वाली कार्यवाही के सम्बन्ध में अंतिम निर्णय करने का अवसर यदि संसद को दिया गया, तो यह आशा की जा सकती है कि वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में संसद के अधिकार सुरक्षित रहेंगे। किन्तु यदि संसद से केवल की हुई कार्यवाही का पुनर्विलोकन करने अथवा अपने असंतोष को प्रकट करने को कहा गया तो, मेरे विचार से, इस व्यवस्था को भी रखने की आवश्यकता नहीं है। सम्भवत: आयुक्त विशेषज्ञ होंगे तथा अपने विषय से सुपरिचित होंगे। इसलिये यह माना जा सकता है कि वे जो सिफारिशें करेंगें उनका आधार सुदृढ़ होगा और राष्ट्रपति अथवा अन्य कोई अधिकारी बिना विचार किये हुये उनकी उपेक्षा न करेगा। इसलिये यह कहा जा सकता है कि इस सीमा तक आयुक्त संसद की शक्तियों का अपहरण करेंगे, केवल यह स्पष्ट करने के लिये कि अंतिम निर्णय करने का अधिकार संसद को प्राप्त हो। मैं इन संशोधनों का समर्थन करता हूं, क्योंकि इनमें भी यही स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। वित्तीय विषयों के सम्बन्ध में लोक सभा की प्रभुता के सम्बन्ध में कोई सन्देह न रखना चाहिये। इसलिये मैं इन संशोधनों का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** क्या मैं एक शब्द कह सकता हूं? मैं यह कहना नहीं चाहता था, किन्तु मुझे अब कहना ही चाहिये। मैं देखता हूं कि सभा में बहुत से सदस्य आपस में बातचीत कर रहे हैं, जिससे जो लोग भाषणों को सुनना भी चाहते हैं उन्हें भी सुनने में कठिनाई होती है। मैं यह देखता हूं कि इस सभा तरफ में भूकर्षण का यह हाल है कि आगे की जगहों से लोग खिंचे हुये पीछे की तरफ में चले जा रहे हैं क्योंकि मैं देखता हूं कि पीछे की जगहों में ऐसे विषयों पर बातचीत करने के लिए अधिक सुविधा मिलती है जिनका सभा के विचाराधीन विषयों से कोई सम्बन्ध नहीं रहता? इसलिये सदस्यों से मेरा यह अनुरोध है कि यदि सभा के विचाराधीन विषय से अतिरिक्त किसी अन्य विषय पर बातें करनी हों तो वे किसी दूसरी जगह की जायें।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल)**:** श्रीमान्, क्या आप कृपा करके वक्ताओं से भी कहेंगे कि वे अपनी बातें इस प्रकार कहें कि सदस्यों का ध्यान आकर्षित हो सके?

***अध्यक्षः** यह मेरी शक्ति से बाहर है।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा : जनरल)**:** श्रीमान् प्रोफेसर शाह जैसे विद्वान सज्जन ने जो आरोप लगाये हैं उनका विरोध करने के लिए ही मैं बोलना चाहता हूं। वे दुर्भाग्य से ऐसे स्थल पर भूतों का दर्शन कर रहे है जहां वे वास्तव में हैं नहीं। उन्होंने संरक्षण की शक्ति की ओर संकेत किया है। मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि इस अनुच्छेद में वे कोई भी ऐसी बात दिखायें जिससे संरक्षण की शक्ति का आभास मिलता हो। एक वित्त-आयोग को स्थापित करने की आवश्यकता है। केवल भारत में ही नहीं बल्कि अन्य देशों में भी इस आवश्यकता का अनुभव किया गया है। इसकी आवश्यकता है और अन्य देशों के संविधानों के आधार पर भारत के लिये जिस संघीय ढांचे का निर्माण किया गया है उसकी आवश्यकताओ को ध्यान में रखते हुये इसे स्वीकार किया गया है। संविधान द्वारा केवल इतना किया गया है कि संसद को वित्त-आयोग स्थापित करने के लिये विधि बनाने की शक्ति दी गई है। इसके अतिरिक्त उसमें वित्त-आयोग के लिये नियुक्त होने वाले लोगों की अर्हतायें तथा सेवा की शर्ते भी निर्धारित की गई हैं। इस सम्बन्ध में मैं अनुच्छेद 260 (2) की ओर संकेत करता हूं जिसमें यह निर्धारित किया गया है कि "संसद विधि द्वारा वित्त-आयोग के सदस्यों की अर्हताओं आदि का निर्धारण करेगी"। मैं प्रोफेसर शाह से प्रार्थना करता हूं कि वे अकारण संदेह न करें। यदि किसी आयोग के सदस्य की नियुक्ति का अर्थ संरक्षकता की शक्ति को प्रयोग में लाना है, तो राज्य के सभी कार्यों को बन्द करना होगा। यह मक्खियों को भगाने के लिये घर में आग लगा देने के समान होगा। इसलिये मुझे आशा है कि प्रोफेसर शाह अकारण एक ऐसी बात का विरोध न करेंगे, जिसका विरोध करने की आवश्यकता ही नहीं है।

हमारे विद्वान प्रोफेसर ने जो आरोप अकारण लगाया है, उसके सम्बन्ध में इतना कहने के पश्चात् मैं इस बहस के महत्वपूर्ण विषय पर आता हूं। मुझे इसका खेद है कि मेरा अपने आदरणीय सहकारियों अर्थात् प्रोफेसर सक्सेना और श्री कामत से मतभेद है। मुझे विश्वास है कि दोनों ने बहुत बड़ी गलती की है। उनका यह विचार है कि संसद की शक्तियों में हस्तक्षेप किया जा रहा है और वर्तमान उपबन्धों के रहते हुये खुले दिल से बहस न की जा सकेगी। उनके ये दो आरोप हैं और इन्हीं के आधार पर उन्होंने इस अनुच्छेद का विरोध किया है।

पहले मैं प्रथम आरोप को उठाऊंगा अर्थात् इसको कि बहस नहीं हो सकेगी। वित्त-आयोग की स्थापना के लिये संसद विधि बनायेगी। वित्त-आयोग की निरपेक्षता पर संदेह नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसकी स्थापना की शक्ति ही संसद को दी गई है। वह विधि बनायेगी और अर्हताओं को निर्धारित करेगी। मंत्रिमण्डल लोगों को नियुक्त करेगा और सम्भवतः गवर्नर जनरल के नाम से नियुक्त करेगा। वह लोगों का प्रतिनिधि-मण्डल होगा। इस दशा में मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है कि एक निरपेक्ष न्यायाधिकरण स्थापित किया जायेगा। इस प्रकार वित्त-आयोग संसद की ही सन्तान—उसे संसद ही अपनी विधि द्वारा स्थापित करेगी।

स्थापित होने पर आयोग बहुत छानबीन करके जांच करेगा और यदि आवश्यकता हुई तो प्रान्तों के आयव्ययों की तथा प्रशासन भी जांच करेगा और कार्यपालिका के समक्ष एक प्रतिवेदन रखेगा। वह कार्यपालिका किसकी होगी? वह संसद की

कार्यपालिका होगी। उसके पश्चात् मंत्रिमण्डल गवर्नर-जनरल के नाम से निर्णय करेगा। वह वित्त-आयोग की सिफारिशों को उसी तरह स्वीकार करेगा जैसे निर्वाचन-न्यायाधिकरण की सिफारिशों को जिसके सम्बन्ध में भी राज्यपाल अथवा गवर्नर जनरल को हस्तक्षेप करने की शक्ति प्राप्त है। किन्तु क्या कोई एक मामला भी ऐसा बताया जा सकता है जिसमें राज्यपाल अथवा गवर्नर जनरल ने हस्तक्षेप किया हो? उन्होंने कभी भी हस्तक्षेप नहीं किया। इसलिये ऐसे उदाहरण हैं जबकि विधि के अधीन निर्मित निकायों की सिफारिशों, चाहे वे न्यायिक हों अथवा अर्धन्यायिक, पूर्णतया स्वीकार की जाती रही हैं।

इसके पश्चात् ये सिफारिशें संसद के दोनों सदनों के समक्ष रखी जायेंगी। इस अवसर पर भी बहस हो सकेगी। प्रक्रिया के नियमों के अधीन सभा का कोई भी सदस्य बहस के लिये प्रस्ताव रख सकता है। राजनैतिक दल भी संसद में बहस के लिये तथा विचार-विमर्श के लिये प्रस्ताव रख सकते हैं। इसलिये संसद का अधिवेशन आरम्भ होते ही विचार-विमर्श हो सकता है।

इसके पश्चात् अनुदान फिर धन-विधेयक के रूप में सभा के सामने रखा जायेगा। इसके अतिरिक्त संसद को प्रश्न के महत्व को समझकर उस पर विचार-विमर्श करने की शक्ति प्राप्त है। क्या यह सम्भव है कि कोई उत्तरदायी मंत्रिमण्डल संसद की इच्छा का विरोध करेगा? यह असम्भव है, जब तक कि हम संसदात्मक लोकतन्त्र को स्थापित न करना चाहें, जिसमें मंत्रिमण्डल संसद की इच्छाओं, उद्देश्यों तथा आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करता है।

मुझे यह और प्रश्न पर विचार करना है और वह भारित विषयों का प्रश्न है। हमारे देश में कई विषय भारित विषय हैं। वे संविधान के अंग हो गये हैं। भारित विषय अवश्य ही रहेंगे। वास्तव में विधान-सभाओं के कारण ही भारित विषय उत्पन्न होते हैं क्योंकि वे विधि बनाती हैं और अपने ही राजस्व तथा व्यय के विषयों को अपने आयव्ययकों पर भारित करने के लिये सहमत हो जाती हैं। इस प्रकार वही उनको जन्म देती हैं। केवल यह प्रश्न रह जाता है कि मंजूरी पहले ली जाये या बाद में केवल इतना ही अन्तर है। इसलिये मैं अपने माननीय मित्रों के इस विचार से सहमत नहीं हूं कि कोई गम्भीर संविधानिक अथवा अन्य प्रकार का अन्याय हुआ है। श्रीमान्, यदि इस सभा में प्रान्तों और राज्यों के राजनीतिज्ञों के बीच गृह-युद्ध हुआ, तो उससे राष्ट्र का हितसाधन न होगा। प्रत्येक सदस्य को इसकी चिंता है कि उसके प्रान्त को अधिक लाभ हो। वास्तव में निर्वाचन के पश्चात् प्रत्येक सदस्य अपने प्रान्त का नहीं, बल्कि सारे भारत का प्रतिनिधित्व करता है। यह सच है किन्तु साथ ही हमें यह भी स्मरण रखना चाहिये कि हम साधारण लोग हैं और हम उस ऊंचे स्तर तक नहीं पहुंच पाते जिस स्तर पर सरदार पटेल और पंडित जवाहरलाल नेहरू पहुंचे हैं। इन कमजोरियों को ध्यान में रखते हुये, मेरे विचार से, यह आवश्यक है कि प्रान्तों को सहायता देने के सम्बन्ध में वित्त-आयोग के समान एक अराजनैतिक निकाय न्यायपूर्ण ढंग से पूरी जांच करे। विधि के अधीन गवर्नर-जनरल को भी कुछ वर्षों के पश्चात् इन अनुदानों में अपनी इच्छानुसार परिवर्तन करने की शक्ति प्राप्त है। इन शब्दों के साथ मैं इस अनुच्छेद का पूर्ण रूप से समर्थन करता हूं तथा जो संशोधन उपस्थित किया गया है, उसका विरोध करता हूं।

***श्री बी.एन. मुनावल्ली** (बम्बई राज्य): अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 261 अब जिस रूप में है उसके अधीन, मेरे विचार से, राष्ट्रपति को वित्त-आयोग की सिफारिशों के साथ उनके आधार पर की हुई कार्यवाही के विवरण को संसद के समक्ष रखने की शक्ति प्राप्त है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कार्यपालिका जिन विभिन्न सिफारिशों को स्वीकार करेगी, तथा उनके आधार पर जिस कार्यवाही को करेगी, उस पर संसद विचार-विमर्श न कर सकेगी। जहां तक मैं अपने मित्र श्री कामत तथा श्री शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधनों को समझ पाया हूं, उनका आशय यह है कि किसी कार्यवाही के पूर्व वित्त आयोग की सिफारिशें संसद की सभा के समक्ष रखी जायें ताकि संसद की सभा वित्त-आयोग की कुछ सिफारिशों का अनुमोदन कर सके अथवा उन्हें स्वीकार या अस्वीकार कर सके। मेरे कुछ मित्रों ने, उदाहरणार्थ मेरे माननीय मित्र डॉ. पी.एस. देशमुख ने यह कहा है कि इस अनुच्छेद से राष्ट्रपति को अधिक शक्ति प्राप्त नहीं होती। यह सच है, किन्तु यदि राष्ट्रपति कार्यपालिका के कार्यवाही करने के पश्चात् सिफारिशों को संसद के सम्मुख रखेगा, तो उसे उन पर विचार-विमर्श करने का अथवा उनका अनुमोदन करने का अवसर नहीं मिलेगा। इस अनुच्छेद में तथा इन संशोधनों में केवल इतना अन्तर है कि संशोधनों का उद्देश्य यह है कि कार्यवाही के पूर्व सिफारिशों पर विचार-विमर्श करने का अधिकार संसद से नहीं छीना जाना चाहिये। यदि सिफारिशों के साथ कार्यपालिका की कार्यवाही का विवरण संसद के समक्ष रखा गया, तो वह केवल उसका अनुमोदन कर सकेगी और उसे अस्वीकार न कर सकेगी। इस स्थिति में मेरी यह धारणा है कि यदि इन संशोधनों को स्वीकार न किया गया, तो संसद की बहुत सी शक्ति छिन जायेगी। इसलिये मैं इन संशोधनों का समर्थन करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि ये स्वीकार कर लिये जायें।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, श्री कामत और श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने जिन संशोधनों को प्रविष्ट करने का प्रस्ताव रखा है वे उपयुक्त संशोधन नहीं हैं। मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि वे इस पर विचार करें कि अनुच्छेद के शब्दों के स्थान में उनके शब्दों को प्रविष्ट करना क्यों उचित नहीं है। अनुच्छेद 261 द्वारा जो शक्ति प्रदान की गई है उसके अतिरिक्त यह शक्ति दी जा सकती है। इस सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं है और इसे सभी स्वीकार करते हैं कि वित्त-आयोग की सिफारिशें केवल सिफारिशें ही होंगी और उन्हें स्वीकार करने के सम्बन्ध में कोई बन्धन नहीं है। किसी न किसी को, चाहे वह राष्ट्रपति हो अथवा संसद, उनके आधार पर कार्यवाही करनी होगी। कुछ विषयों के सम्बन्ध में राष्ट्रपति कार्यवाही कर सकता है। अनुच्छेद 251 के अधीन, जिसे हम पारित कर चुके हैं आयकर का संग्रह केन्द्र करेगा। आयकर का कुछ प्रतिशत प्रान्तों अथवा राज्यों के बीच वितरित होगा। इस बंटवारे की सिफारिश वित्त-आयोग भी करेगा। जब तक वित्त-आयोग इस विषय पर विचार नहीं कर लेता कि कितना प्रतिशत दिया जाये और राज्यों के बीच उनकी आवश्यकताओं के अनुसार आयकर का वितरण किस प्रकार हो, राष्ट्रपति को ही प्रतिशत निर्धारित करने की शक्ति प्राप्त है। जहां तक आयकर का सम्बन्ध है उसमें संसद हस्तक्षेप न करेगी। "विहित" का अर्थ है कि जब तक वित्त-आयोग गठित न हो जाये तब तक "राष्ट्रपति द्वारा आदेश द्वारा विहित" तथा वित्त-आयोग के गठित हो जाने के पश्चात् "वित्त-आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात् राष्ट्रपति द्वारा आदेश द्वारा विहित"। इस अनुच्छेद में संसद का कहीं भी उल्लेख नहीं है। वित्त आयोग के गठित होने

के पूर्व राष्ट्रपति आदेश द्वारा यह निदेश कर सकता है कि प्रान्तों और राज्यों के बीच इतने आयकर को और उसके इतने प्रतिशत को वितरित करना है। आयोग के गठित होने पर राष्ट्रपति आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात् कार्यवाही कर सकता है। वह बंटवारे में तथा प्रतिशत में परिवर्तन कर सकता है। अनुच्छेद 261 इस समय जिस रूप में है उसके अधीन कार्यवाही करने के पश्चात् वह संसद को सूचित करेगा कि सिफारिशों के आधार पर उसने कौन सी कार्यवाही की है। इसलिये अनुच्छेद के शब्दों के स्थान पर अन्य शब्दों को प्रविष्ट करने के बजाय मेरा यह सुझाव है कि अनुच्छेद 261 में निम्नलिखित शब्द जोड़ दिये जायें:

> "उस पर की गई या की जाने वाली कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित, संसद के समक्ष रखवायेगा।"

मैं यह बताऊंगा कि अनुच्छेद के शब्दों के स्थान पर अन्य शब्दों को क्यों नहीं प्रविष्ट किया जा सकता और क्यों अन्य शब्दों को जोड़ा जा सकता है। प्रस्तावित संशोधनों में सन्निहित सिद्धान्त को भी स्वीकार करना है क्योंकि प्रत्येक मामले के सम्बन्ध में राष्ट्रपति कार्यवाही नहीं करेगा। कई विषयों के सम्बन्ध में संसद कार्यवाही करेगी। उदाहरणार्थ, अनुच्छेद 253 में वर्णित उत्पादन शुल्कों को ही लीजिये। अनुच्छेद 253 के अधीन उत्पादन-शुल्क आरम्भ में केन्द्र द्वारा उद्गृहीत तथा संगृहीत किये जायेंगे। इसे संसद निर्धारित करेगी कि उत्पादन-शुल्कों का कितना अंश वितरित किया जाये और किस सिद्धांतों के आधार पर वितरित किया जाये। उत्पादन-शुल्कों के सम्बन्ध में, राज्यों में विभाजित किये जाने वाले जो भी शुल्क केन्द्र द्वारा संगृहीत हों उनके सम्बन्ध में भी वित्त-आयोग अनुच्छेद 261 के अधीन बंटवारे के बारे में सिफारिश करने का क्षेत्राधिकार रखता है। अनुच्छेद 260 के खण्ड (3) का उपखण्ड (क) उद्गृहीत करों के शुद्ध आगम के संघ और राज्यों के बीच वितरण के सम्बन्ध में है। जो कर उद्गृहीत होंगे वे सामान्य कर होंगे। करों में केवल आयकर ही नहीं है बल्कि केन्द्र द्वारा संगृहीत होने वाले अन्य कर भी हैं जैसे उत्पादन कर। किन्तु जहां आयकर को राष्ट्रपति स्वयं आदेश द्वारा वितरित कर सकता है वहां उत्पादन शुल्क संसद निर्मित विधि के अधीन वितरित होंगे। संसद वित्त-आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात् ही विधि बनायेगी और बंटवारा करेगी। इस प्रकार इस सम्बन्ध में दो तरह की कार्यवाहियां होंगी। एक कार्यवाही राष्ट्रपति करेगा और एक कार्यवाही संसद करेगी। इसलिये यदि वर्तमान अनुच्छेद 261 केवल राष्ट्रपति की कार्यवाही के सम्बन्ध में है तो उसमें संसद की कार्यवाही सम्मिलित नहीं है। इस स्थिति में मैं आदरपूर्वक यह सुझाव उपस्थित करता हूं कि इन संशोधनों को तो स्थान न दिया जाये, किन्तु इनमें सन्निहित सिद्धांतों को समाविष्ट कर लिया जाये। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये मेरा यह सुझाव है कि "की गई" शब्दों के बाद "की जाने वाली" शब्द रखे जायें।

श्रीमान्, मैंने कोई संशोधन उपस्थित नहीं किया है। इन संशोधनों के उपस्थित होने पर तथा विचार-विमर्श के पश्चात् मैंने यह अनुभव किया कि ये संशोधन

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

अन्य शब्दों के स्थान पर प्रविष्ट न किये जाने चाहिये बल्कि इन्हें अनुच्छेद में जोड़ देना चाहिये। मैं यह देखता हूं कि कुछ कमी रह गई है और यदि आपको आपत्ति न हो और मेरे माननीय मित्र मसौदा-समिति के सभापति मुझसे सहमत हों तो मैं इस संशोधन को उपस्थित कर सकता हूं:

"उस पर की गई या की जाने वाली कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित, संसद के समक्ष रखवायेगा।"

यदि सभा तथा मसौदा-समिति इस संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार हो तो मैं इस संशोधन को उपस्थित कर सकता हूं।

***अध्यक्ष:** इस समय मैं इस संशोधन को नहीं उठा सकता जब तक कि मसौदा-समिति इसके लिये तैयार न हो।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह दिखाना नहीं चाहता कि मैं बहुत बुद्धिमान हूं किन्तु मैं यह अवश्य कहता हूं कि मेरी यह धारणा है कि इस सभा में वित्त-आयोग के कार्य के सम्बन्ध में बहुत भ्रम रहा है। मैं यह अनुभव करता हूं कि सभा द्वारा पारित अनुच्छेद 260 पर तथा इस अनुच्छेद पर जो वादानुवाद हुआ है उसका आधार यही भ्रम रहा है।

मैं सभा के सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि वे इस खण्ड में सन्निहित योजना की उत्पत्ति पर विचार करें। केन्द्र विधि के अधीन या अन्य प्रकार राज्यों के लिये जो धनराशि अलग रखता है, उसे वितरित करने के लिये आस्ट्रेलिया में एक विशेष प्रणाली का अनुसरण किया जाता रहा है। आस्ट्रेलिया का अनुदान आयोग आस्ट्रेलिया की संघीय संसद ने 1933 में जो अधिनियम पारित किया, उसके अधीन घटित हुआ। वह केवल एक प्रशासन संगठन है और उन्हीं तदर्थ संगठनों के समान है जिन्हें भारत सरकार समय-समय पर जैसे विभिन्न राज्यों के मुख्य मन्त्रियों के सम्मेलन में, वित्त-मंत्रियों के सम्मेलन में तथा अन्य अवसरों पर स्थापित करती आई है। यद्यपि संविधान में राज्यों को यह आश्वासन दिया गया है कि अनुदानों के वितरण के लिये एक निरपेक्ष संगठन स्थापित किया जायेगा, किन्तु वह संसद के अधिनियम के अधीन ही स्थापित किया जायेगा और इस प्रकार उसे जो महत्व प्राप्त हो सकता है उससे अधिक महत्व उसे प्राप्त नहीं होगा। मैं इस सभा के सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि वे इसे स्मरण रखें। इसमें कोई संदेह नहीं है कि संसद इस सम्बन्ध में विधि बना सकती है कि इस अध्याय के उपबन्धों के अधीन रहते हुये केन्द्रीय वित्त का कितना अंश प्रान्तों के बीच वितरित किया जाये। मेरे माननीय मित्र श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने कल मसौदा-समिति की यह आलोचना की थी कि उसने कुछ अनुच्छेदों में तो राष्ट्रपति को बंटवारे को निश्चित करने की शक्ति प्रदान की है, किन्तु एक अनुच्छेद में उसने यह नहीं किया है और इस कारण उन्होंने यह सुझाव रखा कि मेरे माननीय मित्र श्री निकोलस राय का संशोधन स्वीकार कर लिया जाये। इसका कारण यह है कि यह उचित नहीं होगा कि संसद प्रशासन के ब्यौरे के समान साधारण विषय पर विस्तृत रूप से विचार करे और उसके सम्बन्ध में निर्णय करे।

उद्देश्य यह है कि वित्त-आयोग को एक सीमित आधार पर स्थापित किया जाये। मैंने एक बार एक संशोधन की सूचना दी थी, यद्यपि मैंने उसे उपस्थित नहीं किया था, जिसका आशय यह था कि पहले वित्त-आयोग एक कर-अनुसंधान-आयोग का कार्य करे। यदि वित्त-आयोग को यही कार्य करना है तो मैं अपने माननीय मित्र श्री सक्सेना के संशोधन में सन्निहित प्रस्तावों से सहमत हूं। यदि वित्त-आयोग को इस देश की कर-व्यवस्था का पुनर्विलोकन करना है और उसमें सुधार करने के सम्बन्ध में प्रस्ताव प्रस्तुत करना है, तो संसद को उसके प्रतिवेदन पर अवश्य विचार करना चाहिये और इसका निर्णय करना चाहिये कि उसकी सिफारिशों को कार्यान्वित करने के लिये केन्द्रीय सरकार को क्या कार्यवाही करनी चाहिये और इस पर भी विचार किया जाना चाहिये कि इसके सम्बन्ध में संविधान में किस प्रकार के उपबन्ध रखे जाये अथवा किस प्रकार किसी ऐसी विधि का निर्माण किया जाये जो केन्द्रीय सरकार तथा राज्यों पर लागू हो। केवल एक सीमित व्यवस्था की कल्पना की गई है। राज्यों को यह आश्वासन देने के लिए कि उनके प्रति न्याय होगा, मसौदा-समिति ने संविधान में ही वित्त-आयोग के सम्बन्ध में एक उपबन्ध रखा है, यद्यपि इसे संविधान में स्थान देने की बहुत आवश्यकता न थी। यह उद्देश्य एक सीमित उद्देश्य है। सभा मुझे यह दुहराने के लिए क्षमा करेगी कि इस उद्देश्य की पूर्ति संसद के अधिनियम से भी हो सकती है। इसलिये यह अनुच्छेद संसद के अधिनियम से अधिक अधिकृत नहीं समझा जायेगा। इस दशा में संसद को इसे कार्यपालिका के लिए छोड़ देना चाहिये कि वह केन्द्र द्वारा उद्गृहीत तथा संगृहीत कुछ करों के शुद्ध आगम को उसके निश्चित किये हुये सिद्धान्तों के अनुसार विभिन्न प्रांतों में वितरित करे। मैं सभा का ध्यान अनुच्छेद 253 के खण्ड (2) की ओर आकर्षित करता हूं, जिसमें यह कहा गया है कि संसद इसका निर्णय करेगी कि राज्यों को शुल्क की पूरी धनराशि प्रदान की जायेगी अथवा उसका एक अंश प्रदान किया जायेगा और वह धनराशि कितनी होगी और किन सिद्धान्तों के आधार पर वितरित की जायेगी। इस पर संसद को नहीं बल्कि कार्यपालिका को विचार करने की आवश्यकता है कि वितरण-सिद्धान्त किस प्रकार प्रयोग में आये। जब कार्यपालिका उसे उचित रूप से प्रयोग में न लाये तभी संसद का स्पष्टतः यह कर्तव्य हो जाता है कि वह कार्यपालिका से नियमित कार्यवाही करने को कहे। किन्तु सभा को इसे स्वीकार करना पड़ेगा कि आस्ट्रेलिया का अनुदान आयोग तो एक प्रशासन-संगठन है, किन्तु हमारा वित्त-आयोग प्रशासन संगठन को केवल सहायता देगा, भले ही वह संविधान के एक अनुच्छेद के अधीन गठित हुआ हो और उसकी सिफारिशों पर कार्यपालिका राज्यों के मंत्रियों से परामर्श करके निर्णय करती हो। स्वभावतः यह आयोग एक स्थायी संगठन होगा अथवा अर्ध-स्थायी संगठन होगा। किन्तु यदि विभिन्न प्रान्तों के दावों के सम्बन्ध में निर्णय करने का कार्यभार संसद अपने ऊपर ले रही है, तो वित्त-आयोग को स्थापित करने के स्थान पर हम राज्य के वित्त-मंत्रियों तथा अन्य मंत्रियों का एक प्रकार का सम्मेलन कर सकते हैं, जो संसद के समक्ष एक प्रतिवेदन रखेगा और संसद उस पर विचार करेगी तथा कार्यवाही करेगी। किन्तु इसका परिणाम क्या होगा? मैं सभा से अनुरोध करता हूं कि वह स्मरण रखे कि यहां कल तथा परसों क्या हुआ, जब अन्य प्रान्तों के हितों की ओर बिल्कुल भी ध्यान न देते हुए अपने-अपने प्रान्तों के अधिकारों पर जोर दिया गया और बहुत समय तक जोर दिया गया। कुछ सदस्य इस विषय पर 75 मिनट तक बोले। आखिर किस उद्देश्य से? वितरित होने वाली राजस्व

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

की कुल धनराशि अथवा वक्ता महोदयों के प्रान्तों के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों से भाषणों का कोई सम्बन्ध नहीं था। ताकि संसद के सदस्य्य अपने-अपने प्रान्तो के दावे उपस्थित न करें और उनके कुछ समूह कुछ विशेष प्रान्तों के हितों पर ही जोर न दें, हमने यह कार्य एक प्रशासन संगठन को सौंपने का प्रस्ताव किया है जो मध्यस्थता करेगा और निर्णय करेगा। यदि उसकी सिफारिशें उपुयक्त होंगी तो कार्यपालिका उन्हें स्वीकार कर सकती है।

मेरे माननीय मित्र श्री सक्सेना ने लोक-वित्त का गहन अध्ययन किया है और मेरे विचार से वे यह अनुभव करेंगे कि संसद को इस दायित्व को सौंपने का प्रस्ताव करके वे वास्तव में उनमें फूट डाल रहे हैं। इस दायित्व को हम संसद से जितना दूर रखेंगे, उतना ही भविष्य में देश का हित साधन होगा और इसलिये हमें इसे वित्त-आयोग को सौंप देना चाहिये। मेरे विचार से संशोधन के समर्थन में सदस्य महोदयों ने जो तर्क उपस्थित किया है, उसमें कुछ सार नहीं है।

किन्तु श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने जो संशोधन उपस्थित किया है, उसमें एक तर्कयुक्त बात है। इस अनुच्छेद में 'उस पर की गई कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित, संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवायेगा' शब्द प्रयुक्त हैं और उनका यह अर्थ भी है कि यदि कोई बात रह जाये, तो संसद में बहस की जा सकती है और जिन लोगों के हाथ में देश का वित्त होगा वे यह बता सकेंगे कि कौन सी कार्यवाही की गई है और कौन सी कार्यवाही नहीं की गई है। इस बहस से यद्यपि इसका निर्णय न हो सकेगा कि उस समय क्या कार्यवाही करनी थी, किन्तु उससे भविष्य में पथप्रदर्शन होगा। इसलिये मेरे विचार से सभा के लिये यही उचित है कि वह इस संशोधन को स्वीकार न करे, वह इस कारण नहीं कि वह तर्कशून्य है बल्कि इस कारण कि वह बिना यह समझे हुए उपस्थित किया गया है कि अनुच्छेद 260 और 261 का सीमित उद्देश्य है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, डॉ. अम्बेडकर ने जो अनुच्छेद उपस्थित किया है, उसका समर्थन करने के लिए मैं अपनी जगह से उठा हूं। इस अनुच्छेद के विरोधियों से मैं इस कारण सहमत नहीं हूं कि उन्होंने संसद के सम्पूर्ण प्रभुत्व के पक्ष में तर्क उपस्थित किया है, किन्तु इस अनुच्छेद में इसे स्वीकार नहीं किया गय है। इंग्लिस्तान के समान एकसत्तात्मक राज्यों में ही संसद को सम्पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त है। संघीय संविधान में इस प्रकार का सम्पूर्ण प्रभुत्व वध नहीं समझा जाता है। राजनैतिक सम्पूर्ण प्रभुत्व लोगों को प्राप्त होता है। हमने केन्द्र और प्रान्तों के बीच शक्ति का विभाजन किया है। उन विषयों के सम्बन्ध में भी जो संघीय सरकार के लिये अलग रखे गये हैं शक्ति, राज्य के तीन अंगों के बीच अर्थात उच्चतम न्यायालय के रूप में न्यायपालिका, संसद और राष्ट्रपति के बीच विभाजित की गई है। पिछले वर्ष किसी अवसर पर अन्य स्थल पर मैंने यह प्रश्न उठाया था कि संविधान के अधीन राष्ट्रपति को सम्पूर्ण शक्तियां प्राप्त हैं और मन्त्रियों की मंत्रणा का यह अर्थ नहीं है कि वे शक्तियां सीमित हो जाती हैं। श्रीमान्, इसे ध्यान में रखते हुए कि हमारे संविधान में विषयानुसार किसी प्रभु को स्थान नहीं दिया गया है, इस सभा के सम्पूर्ण प्रभुत्व के सम्बन्ध में सभी चर्चा अप्रासंगिक हैं।

***श्री रोहणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री कामत और श्री सक्सेना ने जो संशोधन उपस्थित किये हैं उनका घोर विरोध करने के लिए मैं यहां उपस्थित हुआ हूं। श्रीमान् मेरा यह निवेदन है कि इस संशोधित अनुच्छेद 260 का वे लोग स्वागत कर रहे हैं जिनके प्रति पहले अन्याय होता रहा है क्योंकि इसके अधीन पांच वर्ष के बाद नहीं बल्कि दो ही वर्ष बाद एक वित्त-आयोग गठित होगा और उसके पश्चात् वह प्रत्येक पांच वर्ष की समाप्ति पर गठित होगा। श्रीमान्, यदि अपेक्षाकृत कुछ अभागे प्रान्तों के प्रति न्याय करना हो तो यह आयोग शीघ्र से शीघ्र गठित होना चाहिये। इसलिये अनुच्छेद 260 में वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रपति की कार्यवाही के सम्बन्ध में जो उपबन्ध है वह एक उपयुक्त उपबन्ध है। यदि इस सम्बन्ध में निर्णय करने का अधिकार संसद को दिया गया तो इसका अवश्य ही यह अर्थ होगा कि उस पर संसद के दोनों सदनों को विचार करना होगा। यदि श्री सक्सेना का संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो केवल लोक सभा को ही उस पर विचार करना होगा किन्तु उसका अर्थ यह होगा कि देर होगी और प्रत्येक प्रान्त अपने भाग के लिए अथवा अपने भाग से अधिक धनराशि प्राप्त करने के लिए लड़ेगा और जिन प्रान्तों का अधिक प्रभाव है वे अपने भाग से अधिक प्राप्त कर लेंगे और अन्य प्रान्तों को उसकी अधिक आवश्यकता होने पर भी उन्हें उस धनराशि से वंचित रखेंगे। इसलिये शीघ्रातिशीघ्र न्याय होने तथा यथोचित रूप से न्याय होने के पक्ष में यही है कि राष्ट्रपति या शीघ्र निर्णय करे और उसकी सूचना विधान मण्डल को दे। मेरे मित्र श्री कामत चाहते हैं कि इस निर्णय की सूचना के साथ एक व्याख्यात्मक विवरण भी हो। यह हो या न हो किन्तु चूंकि श्री कामत यह चाहते हैं कि उन्हें आलोचना का अवसर प्रदान करने के लिए एक व्याख्यात्मक विवरण दिया जाये इसलिये वह अवश्य ही दिया जाये। उससे हमें कोई हानि न होगी। किन्तु मैं उन गरीब प्रांतों की ओर से, जो यह समझते हैं कि वित्त के सम्बन्ध में उनके प्रति अन्याय होता रहा है, यह कहना चाहता हूं कि अन्याय वर्तमान सरकार ने नहीं किया है बल्कि पिछली सरकार ने किया है। उसके निराकरण के लिए हम अनुच्छेद 261 का मूल रूप में स्वागत करते हैं।

***श्रीमती जी दुर्गाबाई** (मद्रास : जनरल): मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करती हूं कि अब मत लिया जाये।

***श्री जगत नारायण लाल** (बिहार जनरल): श्रीमान्, यह बात नहीं है कि जो प्रश्न हमारे सामने है उसे हल करने में कोई कठिनाई नहीं है। यह सच है कि वित्त-आयोग विशेषज्ञों का एक संगठन होगा और उसमें कुछ ऐसे विशेषज्ञ भी होंगे जो इसका निर्णय करेंगे कि विभिन्न प्रान्तों को कितनी धनराशि दी जाये। यदि अपनी इच्छानुसार कार्य करवाने के लिये विभिन्न प्रान्त संसद को अपना अखाड़ा बनायेंगे तो केन्द्रीय सरकार बड़ी कठिनाई में पड़ जायेगी। साथ ही गरीब प्रान्तों की कठिनाई ज्यों की त्यों बनी रहेगी। आखिर वित्त आयोग एक छोटा संगठन होगा। यदि वित्त-आयोग उन प्रान्तों के प्रति न्याय न कर सकेगा जो बंटवारे से प्राप्त धनराशि से अपना काम नहीं चला सकते, तो बड़ी जटिल स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। मेरी इच्छा तो यह है कि मैं उस संशोधन का समर्थन करूं जिसका आशय यह है कि कुछ मामलों में वित्त-आयोग के निर्णय के विरुद्ध अपील की जा सकती है। इस समय यह अनुच्छेद जिस रूप में है उसके अधीन उसके निर्णय के विरुद्ध

[श्री जगत नारायण लाल]

अपील नहीं की जा सकती। यदि कोई इस आशय का उपबन्ध रखा जा सकता कि वित्त–आयोग की सिफारिशों का कुछ मामलों में पुनर्विलोकन होगा तो मैं उस उपबन्ध का अथवा इस आशय के संशोधन का स्वागत करता। इस प्रकार की कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं। उस संशोधन का समर्थन न करके जिसका उद्देश्य यह है कि अवर सदन प्रत्येक मामले पर विचार करे और अपना निर्णय करे मैं यह सुझाव रखता हूं कि कोई ऐसा उपबन्ध रखा जाये जिसके अधीन कुछ मामलों में वित्त आयोग की सिफारिशों का पुनर्विलोकन हो सके और उनके सम्बन्ध में निर्णय किया जा सके। मेरे यही कुछ सुझाव हैं।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः__ अध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उन्हें मैं स्वीकार नहीं कर सकता। मुझे यह दिखाई देता है कि इन संशोधनों का आधार इस अनुच्छेद का मिथ्या बोध ही है। मेरे विचार से इसे संशोधित करने की आवश्यकता नहीं है। अनुच्छेद 261 के आशय को ठीक–ठीक समझने के लिये पहले के उन अनुच्छेदों को देखने की आवश्यकता है जो आयकर के तथा केन्द्र द्वारा संगृहीत उत्पादन–शुल्कों के वितरण के सम्बन्ध में हैं। यह स्पष्ट है कि आयकर के वितरण के सम्बन्ध में हम जिस अनुच्छेद को पारित कर चुके हैं उसके अधीन राष्ट्रपति को ही पूर्ण शक्ति प्राप्त है किन्तु वह वित्त–आयोग की सिफारिश के आधार पर कार्य करेगा। इस दशा में अब एक ऐसे संशोधन को स्थान नहीं दिया जा सकता जिसका आशय यह है कि आयकर के वितरण सम्बन्धी सिफारिशों पर संसद निर्णय करे। मेरा यह निवेदन है कि इस विषय के सम्बन्ध में हमारे हाथ बंध गये हैं चूंकि हम एक ऐसा अनुच्छेद पारित कर चुके हैं जिसके अधीन राष्ट्रपति को आरम्भ में अथवा आगे की बदली हुई स्थिति में आयकर के वितरण तथा बंटवारे की शक्ति दी गई है।

अनुच्छेद 261, केन्द्र द्वारा उद्गृहीत उत्पादन शुल्कों से प्राप्त राजस्व के वितरण के सम्बन्ध में है। जिस अनुच्छेद को हम पारित कर चुके हैं उससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि इस विषय के सम्बन्ध में संसद–निर्मित विधि के अनुसार निर्णय किया जायेगा। राष्ट्रपति स्वयं निर्णय नहीं कर सकता। इसलिये "उस पर की गई कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित, संसद के समक्ष रखवायेगा" शब्दों का केवल यह अर्थ है कि राष्ट्रपति यह कहेगा, और उसे यह कहना ही पड़ेगा, कि उत्पादन शुल्कों के आगम को नियमित करने तथा उसकी मंजूरी के लिये और उसके बंटवारे की प्रणाली निश्चित करने के लिए संसद के सामने एक विधेयक लाया जायेगा। यदि मेरे मित्र प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना अनुच्छेद 261 को पहले पारित किये हुये अनुच्छेदों के साथ पढ़ेंगे तो वे यह अनुभव करेंगे कि जहां तक उत्पादन शुल्कों के वितरण का सम्बन्ध है इस अनुच्छेद से उनके संशोधन के उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है। इसलिये मेरे विचार से उनके संशोधन की कोई आवश्यकता नहीं है।

*__अध्यक्षः__ अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2950 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 261 में 'together with an explanatory memorandum as to the action taken

thereon' (उस पर की गई कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित) शब्दों के स्थान पर 'together with such explanatory memorandum as he may think fit' (ऐसे व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित जिसे वह उचित समझे) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2950 में प्रस्तावित 'each House of Parliament (संसद के प्रत्येक सदन) शब्दों के स्थान पर 'each House of Parliament for such action thereon as Parliament may deem necessary' (संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष ऐसी कार्यवाही के लिए रखवायेगा जिसे संसद आवश्यक समझे) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2950 के सम्बन्ध में 'action taken thereon to be laid before Parliament' (उस पर की गई कार्यवाही के व्याख्यात्मक ज्ञापन के सहित, संसद के समक्ष रखवायेगा) शब्दों के स्थान पर निम्नलिखित शब्द रखे जायें:–

'Containing his proposals for action that should be taken thereon to be laid before each House of Parliament. The House of the People shall have the right to amend the proposals made by the President by a resolution passed by the House of the People. The proposals of the President in their original form or in the form in which they emerge after they are amended by the House of the People shall thereafter become law.'

(जिसमें उस पर की जाने वाली कार्यवाही के सम्बन्ध में उसके प्रस्ताव हों, जो संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखे जायें। लोक सभा को राष्ट्रपति के प्रस्तावों को एक संकल्प द्वारा संशोधित करने का अधिकार होगा, जिसे लोक सभा पारित करेगी उसके पश्चात् राष्ट्रपति के प्रस्ताव, मूल रूप में अथवा लोक सभा द्वारा संशोधित होने पर वे जिस रूप में हों उस रूप में, विधि का रूप धारण करेंगे।)' "

संशोधन गिर गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 261 में 'Parliament' (संसद) शब्द के स्थान पर 'each House of Parliament' (संसद के प्रत्येक सदन) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 261, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 261, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 262

*__अध्यक्षः__ संशोधन संख्या 141 एक शाब्दिक संशोधन है। मैं समझता हूं कि प्रत्येक बार इस प्रकार के रस्मी संशोधनों को उपस्थित करने की आवश्यकता का अनुभव न किया जायेगा।

*__श्री एच.वी. कामतः__ यह संशोधन, संशोधन संख्या 2951 के सम्बन्ध में है। यदि वह संशोधन उपस्थित न किया गया तो इसकी आवश्यकता न पड़ेगी।

*__अध्यक्षः__ मैं यह सुझाव उपस्थित कर रहा हूं कि ऐसे शाब्दिक संशोधनों को जैसे 'भारत राजस्व' के स्थान पर 'भारत की संचित निधि' रखना, मसौदा समिति के लिये छोड़ देना चाहिये। जब कभी ऐसी पदावलियां आयेंगी मसौदा समिति उन्हें शुद्ध कर लेगी।

*__श्री एच.वी. कामतः__ संशोधन संख्या 2951 का उद्देश्य यह है कि 'भारत का राजस्व' शब्दों के स्थान पर 'भारतीय राजस्व' शब्द रखे जायें। यदि वह संशोधन उपस्थित न किया गया तो मेरे संशोधन की आवश्यकता न रहेगी।

*__अध्यक्षः__ उसकी सूचना उस समय दी गई थी जब हमने 'संचित निधि' पदावली को स्वीकार नहीं किया था।

क्या इस अनुच्छेद पर कोई सज्जन बोलना चाहते हैं? प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 262 संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 262 संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 263

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 263 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:

'263. (1) The custody of the Consolidated Fund of India, the payments of moneys into such Fund, the withdrawal of moneys therefrom and all other matters connected with or ancillary to the matters aforesaid shall be regulated by law made by Parliament, and until provision in that behalf is so made by Parliament, shall be regulated by rules made by the President.

Custody of consolidated Funds, the payment of moneys into and withdrawal of moneys from such funds

(2) The custody of the Consolidated Fund of a State, the payments of moneys into such Fund and the withdrawal of moneys therefrom, and all other matters connected with or ancillary to the matters aforesaid shall be regulated by law made by the Legislature of the State, and, until provision in that behalf is so made by the Legislature of the State, shall be regulated by rules made by the Governor of the State.' "

[263. (1) भारत की संचित-निधि की अभिरक्षा, ऐसी निधि में धन का डालना, उससे धन का निकालना तथा उपर्युक्त विषयों से संसक्त या सहायक अन्य सब विषयों का विनियमन संसद द्वारा निर्मित विधि से होगा तथा जब तक उसके लिये उपबन्ध इस प्रकार संसद द्वारा न किया जाये तब तक राष्ट्रपति द्वारा निर्मित नियमों से होगा।

(2) राज्य की संचित निधि की अभिरक्षा, ऐसी निधि में धन डालना, उससे धन निकालना तथा उपयुक्त विषयों से संसक्त या सहायक अन्य सब विषयों का विनियमन राज्य के विधान मण्डल द्वारा निर्मित विधि से होगा तथा जब तक उसके लिय उपबन्ध इस प्रकार राज्य के विधान मण्डल द्वारा न किया जाये तब तक राज्य के राज्यपाल द्वारा निर्मित नियमों से होगा।]

मेरे विचार से इस सम्बन्ध में किसी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"डॉ. अम्बेडकर ने अभी जो संशोधन उपस्थित किया था उसमें जहां कहीं 'Consolidated Fund' (संचित निधि) शब्द आये हों उनके बाद 'and the Contingency Fund' (और आकस्मिकता निधि) शब्द प्रविष्ट किये जायें और जहां कहीं 'such Fund' (ऐसी निधि) शब्द आये हों उने स्थान पर 'such Funds' (ऐसी निधियां) शब्द रखे जायें।"

सभा आकस्मिकता निधि की स्थापना के लिये स्वीकृति दे चुकी है। इसलिये इस सम्बन्ध में उपबन्ध रखने की आवश्यकता है कि आकस्मिकता निधि में किस प्रकार धन डाला जाये और उससे किस प्रकार धन निकाला जाये। यह एक रस्मी संशोधन है और मुझे आशा है कि सभा इसे स्वीकार कर लेगी।

***अध्यक्षः** मैं यह मान लेता हूं कि डॉ. अम्बेडकर पंडित कुंजरू के संशोधन को स्वीकार कर लेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं इस संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"उपरोक्त संशोधन संख्या 206 में प्रस्तावित अनुच्छेद 263 में जहां कहीं 'Consolidated Fund' (संचित निधि) शब्द आये हों उनके बाद 'and the Contingency Fund' (और आकस्मिकता निधि) शब्द प्रविष्ट किये जायें और जहां कहीं 'such Fund' (ऐसी निधि) शब्द आये हों उने स्थान पर 'such Funds' (ऐसी निधियां) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित अनुच्छेद 263, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 263, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 263क

***अध्यक्षः** एक अतिरिक्त अनुच्छेद है जिसे डॉ. अम्बेडकर उपस्थित करना चाहते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** क्या मैं सुझाव रख सकता हूं कि उसे स्थगित रखा जाये?

अध्यक्ष: अच्छी बात है। तब हम अनुच्छेद 267 को उठाते हैं। अनुच्छेद 264, 265 और 266 आज की सूची में उल्लिखित नहीं हैं।

अनुच्छेद 267

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: श्रीमान्, मैं यहे प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 267 में–

(1) 'Crown in India' (भारत में सम्राट के अधीन) शब्दों के बाद 'or after such commencement in connection with the affairs of the Union or of a State' (अथवा ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् संघ के या किसी राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में) शब्द प्रविष्ट किये जायें;

(2) 'revenue of India' (भारत का राजस्व) शब्द जहां कहीं आये हों उनके स्थान पर 'Consolidated Fund of India' (भारत की संचित निधि) शब्द रखे जायें;

(3) 'revenues of a State' (किसी राज्य का राजस्व) शब्द जहां कहीं आये हों उनके स्थान पर 'Consolidated Fund of a State' (किसी राज्य की संचित निधि) शब्द रखे जायें;

(4) 'for the time being specified in Part I of First Schedule' (इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित) शब्द और अंक निकाल दिये जायें; और

(5) 'revnues of the State' (राज्य का राजस्व) शब्दों के स्थान पर 'Consolidated Fund of the State' (राज्य की संचित निधि) शब्द रखे जायें।"

यह संशोधन अन्य संशोधनों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"उपरोक्त संशोधन संख्या 102 के भाग (1) के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:

'(1) 'Crown in India' (भारत में सम्राट के अधीन) शब्दों के स्थान पर 'Government of India prior to 15th August, 1947 or after such commencement in connection with the affairs of the Union or the Government of a State' (15 अगस्त 1947 के पूर्व भारत सरकार के अधीन अथवा ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् संघ के या किसी राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में) शब्द रखे जायें।' "

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

श्रीमान्, मैंने इस संशोधन को इसलिये उपस्थित किया है कि मैं यह नहीं चाहता कि हमारे संविधान में "भारत में सम्राट" शब्द रहें और भविष्य में हमें अपने दासत्व-काल का स्मरण कराते रहें। मेरे विचार से ये शब्द बहुत आवश्यक नहीं हैं। और "15 अगस्त के पूर्व भारत सरकार" शब्द रखकर उन्हें निकाला जा सकता हैं। मेरे विचार से यह एक सीधा-सादा संशोधन है जो मुझे विश्वास है कि सभा की भावना इसके पक्ष में है। संशोधन का आगे का अंश वही है जो डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का है और, मेरे विचार से, वे उसे स्वीकार कर लेंगे। मेरे विचार से "भारत में सम्राट" शब्दों के स्थान पर "15 अगस्त 1947 से पूर्व भारत सरकार" शब्द रखे जाने चाहियें।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मैं तृतीय सप्ताह की सूची 4 के संशोधन संख्या 142, 143, 144 और 145 को उपस्थित करता हूं। संशोधन संख्या 142 इस प्रकार है:

"संशोधनों पर संशाधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के भाग (1) में, अनुच्छेद 267 में, 'in connection with the affairs of the Union or of a State' (संघ के या किसी राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में) प्रस्तावित शब्दों के स्थान पर 'under the Government of the Union or of a State' (संघ की अथवा किसी राज्य की सरकार के अधीन) शब्द रखे जायें।"

दूसरा संशोधन अर्थात् संशोधन संख्या 143 इस प्रकार है:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 267 के खण्ड (क) में 'in connection with the affairs of such a State' (राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में) शब्दों के स्थान पर 'under the Government of such a State' (राज्य की सरकार के अधीन) शब्द रखे जाये।"

संशोधन संख्या 144 इस प्रकार है:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 267 के खण्ड (ख) में, 'in connection with the affairs of the Union or another such State'(संघ या अन्य राज्य के कार्यों के संबंध में) शब्दों के स्थान पर 'under the Government of the Union or another' such State' (संघ या अन्य राज्य की सरकार के अधीन) शब्द रखे जायें।"

श्रीमान्, मेरा अन्तिम संशोधन, अर्थात् इसी सूची का संशोधन संख्या 145 इस प्रकार है:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 267 में 'an arbitrator' (कोई मध्यस्थ) शब्दों के स्थान पर 'a tribunal' (कोई न्यायाधिकरण) शब्द रखे जायें।"

ये सब संशोधन सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के सम्बन्ध में हैं जिसे डॉ. अम्बेडकर ने अभी सभा के सामने उपस्थित किया है। मेरे ये चार संशोधन दो श्रेणियों में विभाजित किये जा सकते हैं। पहले तीन संशोधन एक समान हैं और अन्तिम संशोधन दूसरी श्रेणी में आता है। पहले तीन संशोधनों का उद्देश्य यह है कि इस अनुच्छेद के कुछ शब्दों के स्थान में अन्य शब्द रखे जायें। मेरे विचार से इस अनुच्छेद में अनावश्यक और बोझल शब्दावली प्रयुक्त हैं और मेरे विचार से वह इन संशोधनों से दूर हो जायेगी। मैं कह नहीं सकता कि "संघ अथवा राज्य के कार्य" पदावली प्रयुक्त करके मसौदा-समिति संघ अथवा राज्य की सरकार के अधीन किसी व्यक्ति की सेवा के अतिरिक्त अन्य किसी आशय को व्यक्त करना चाहती है। यह अनुच्छेद किसी ऐसे व्यक्ति को अथवा उसके बारे में देय निवृत्ति-वेतन के सम्बन्ध में है जिसने संघ के अथवा राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा की हो। स्वभावत: यदि किसी व्यक्ति ने सेवा की हो और उसे कुछ निवृत्ति वेतन देय हो तो उसे वह निवृत्ति-वेतन, मेरे विचार से संघ की अथवा राज्य की सरकार से प्राप्त होना चाहिये। इसलिये मेरी यह धारणा है कि "संघ के कार्य" शब्दों से आशय अस्पष्ट हो जायेगा। किस प्रकार के कार्य? संघ अथवा राज्य कई प्रकार के कार्य कर सकते हैं। मेरे विचार से इस अनुच्छेद से संघ के अपने कार्य अथवा संघ और एककों के आपस के कार्य अभिप्रेत नहीं हैं बल्कि केवल सरकारी कार्य अभिप्रेत हैं इस कारण इस अनुच्छेद को स्पष्ट करने की आवश्यकता है। अर्थात् उसमें यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया जाना चाहिये कि यदि कोई व्यक्ति ऐसी सेवा करेगा जिसके लिये निवृत्ति-वेतन मिल सकता है तो उसका सम्बन्ध संघ की सरकार अथवा किसी राज्य की सरकार से होगा।

किन्तु यदि इस अनुच्छेद के मसौदे का आशय वही है जिसे मैं व्यक्त कर रहा हूं तो मेरा संशोधन एक रस्मी और शाब्दिक समझा जाये क्योंकि इससे शब्दावली कम बोझल तथा अधिक स्पष्ट हो जायेगी। इसे सब जानते हैं कि अंग्रेजी भाषा एक बहुत ही बोझल भाषा है। हम में से कुछ लोग उसे और भी बोझल बना देते हैं। मुझे बर्नर्ड शा का एक व्यंगपूर्ण कथन स्मरण हो आया है। एक बार उन्होंने कहा कि अंग्रेजी भाषा अभिव्यंजना का एक बहुत ही पेचिदा साधन है और जब हम यह कहना चाहते हैं कि हम कोई बात नहीं कर सकते तो हम अंग्रेजी में कहते है "मुझे बहुत खेद है, मुझे इसका खेद है कि मैं यह काम नहीं कर सकता"। एक चीनी इसी आशय को 'नो कैन' कहकर व्यक्त कर देता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मैं यह नहीं चाहता कि मसौदा-समिति चीनियों के समान थोड़े ही शब्द कहे जिनसे अनुच्छेद का आशय ही स्पष्ट न हो किन्तु मैं यह अवश्य चाहता हूं कि "संघ के कार्यों के सम्बन्ध में" पदावली को स्पष्ट कर देना चाहिये ताकि उसका अर्थ स्पष्ट हो जाये और उससे यह व्यक्त हो कि संघ की सरकार अथवा राज्य की सरकार के अधीन की हुई सेवा ही इस अनुच्छेद से अभिप्रेत है और उनके अन्य कोई कार्य अभिप्रेत नहीं हैं। अनुच्छेद 142, 143 और 144 के सम्बन्ध में, जिन्हें मैंने अभी सभा के सम्मुख उपस्थित किया था, मुझे यही तर्क उपस्थित करना था।

[श्री एच.वी. कामत]

संशोधन संख्या 145 के सम्बन्ध में, जिसका उद्देश्य यह है कि 'मध्यस्थ' शब्द के स्थान पर 'न्यायाधिकरण' शब्द रखा जाये, मैं आरम्भ में ही इसे स्वीकार किये लेता हूं कि मैं व्यवहार-विधि तथा तत्सम्बंधी अन्य विधि से बहुत कुछ अनभिज्ञ ही हूं। संविधानिक विधि तथा व्यवहार विधि में मध्यस्थ तथा न्यायाधिकरण में भेद किया जाता है। मैं इस सम्बन्ध में अंतिम बात नहीं कह सकता। किन्तु कई क्षेत्रों में मैंने जो अनुभव प्राप्त किया और जो थोड़ा बहुत ज्ञान प्राप्त किया उसके आधार पर मैं कह सकता हूं कि किसी मामले के सम्बन्ध में नियुक्त किये गये मध्यस्थ से न्यायाधिकरण का अधिक संविधानिक महत्व है। यदि वह अनुच्छेद उसी रूप में स्वीकार कर लिया गया जिस रूप में इसे डॉ. अम्बेडकर ने सभा के सामने रखा है, तो यह समझ में आ सकता है और इसकी सम्भावना भी है कि इस अनुच्छेद के उपबन्धों के अधीन कई ऐसे मामले उठ खड़े होंगे जिनमें सम्बंधित पक्षों का आपस में मतभेद होगा। हो सकता है कि एक दो मामले नहीं बल्कि सैकड़ों मामले उठ खड़े हों क्योंकि उनसे केवल संघ का ही सम्बन्ध न होगा बल्कि कई राज्यों का भी सम्बन्ध होगा। क्या इस अनुच्छेद को स्वीकार करने पर हम प्रत्येक मामले के लिये एक मध्यस्थ नियुक्त करेंगे? इसका अर्थ यह होगा कि कई अवसरों पर भिन्न-भिन्न मध्यस्थों को नियुक्त करेंगे। अथवा क्या हमारा आशय यह है कि जिन मामलों में मतभेद हो उन सभी मामलों को निबटाने के लिए हम कई सुयोग्य व्यक्तियों का, कई अपने-अपने विषयों के विशेषज्ञों का एक निकाय बनायेंगे और जब कभी ये मामले उठेंगे, वे इनकी परीक्षा करेंगे और इनके सम्बन्ध में निर्णय करेंगे? यदि हमारा यही उद्देश्य है तो मेरे विचार से एक न्यायाधिकरण की आवश्यकता है न कि मध्यस्थ की। मेरे विचार से इस अनुच्छेद की शब्दावली भी उपयुक्त शब्दावली नहीं है। उसमें कहा गया है कि एक मध्यस्थ होगा और इसका अर्थ यह है कि एक ही होगा। मुझे विश्वास है कि हम 'एक' शब्द के अर्थ पर विवाद न करेंगे। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि भारत के मुख्य न्यायाधिपति को इस सम्बन्ध में शक्ति प्रदान की गई है। किन्तु यह कहना कि वह 'एक मध्यस्थ' नियुक्त करेगा और इससे अधिक या कम नियुक्त नहीं करेगा, क्योंकि कम तो हो ही नहीं सकता और वह इस कारण कि एक से कम शून्य ही होगा, यह अर्थ रखता है कि हम मुख्य न्यायाधिपति के साथ बांध दे रहे हैं। वह यह विचार कर सकता है कि कोई मामला बहुत पेचीदा है अथवा बहुत से मामले उठाये गये हैं अथवा मामले विभिन्न प्रकार के हैं और एक ही व्यक्ति उन सभी मामलों को नहीं निबटा सकता और वह यह भी विचार कर सकता है कि उन मामलों के सम्बन्ध में किसी मध्यस्थ की अपेक्षा न्यायाधिकरण अधिक योग्यता से निर्णय करेगा। मेरे विचार से मध्यस्थ के सम्बन्ध में दोनों पक्षों को पहले यह कहना होगा कि वे उसके निर्णय को मानेंगे। किन्तु यदि कोई न्यायाधिकरण नियुक्त किया गया और साथ ही हम संविधान में यह उपबंधित कर दें कि उसका निर्णय अंतिम निर्णय होगा और उसके विरुद्ध अपील नहीं की जा सकेगी तो हम मध्यस्थ नियुक्त करने के सम्बन्ध में इस उपबन्ध की अपेक्षा कहीं अधिक उपयुक्त व्यवस्था स्वीकार करेंगे। जब संविधान प्रवर्तन में आयेगा और यह अनुच्छेद प्रयोग में आयेगा तो इस प्रकार के कई मामले उठेंगे और एक ही मध्यस्थ शीघ्रता तथा सुयोग्यता के साथ उन्हें नहीं निपटा सकेगा। मैं तो यहां तक कहता हूं कि वह

उन पर पूर्ण निरपेक्षता से भी विचार नहीं कर सकेगा और न यथोचित न्याय ही कर सकेगा। इन मामलों को निबटाने के लिये एक उच्च कोटि के न्यायाधिकरण की आवश्यकता है और इसलिये मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि इस अनुच्छेद में मध्यस्थ के सम्बन्ध में जो उपबन्ध है उसके स्थान पर इस आशय का उपबन्ध रखना चाहिये कि भारत के मुख्य न्यायाधिपति को यह शक्ति दी जाती है कि जब कभी इस प्रकार के मामले उठें वह उन्हें निबटाने के लिये एक सुगठित न्यायाधिकरण को नियुक्त करे। इसलिये मैं संशोधन संख्या 142, 143, 144 और 145 को उपस्थित करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि उन पर विचार किया जाये।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** अध्यक्ष महोदय, यह एक सीधा-सादा अनुच्छेद है और मेरे विचार से इसे पारित करने में सभा को अधिक समय न लगाना चाहिये। यह केवल कुछ व्ययों और निवृत्ति-वेतनों के समायोजन के सम्बन्ध में है। श्री कामत ने इस आशय का एक संशोधन उपस्थित किया है कि 'मध्यस्थ' शब्द के स्थान पर 'न्यायाधिकरण' शब्द रखा जाये। मैं उन्हें यह बताना चाहता हूं कि मध्यस्थ के स्थान में न्यायाधिकरण की व्यवस्था करना अनावश्यक है और साथ ही उस पर अधिक धन भी व्यय होगा। सम्भावना इसी की है कि छोटे मामले उठेंगे और यह पर्याप्त व्यवस्था होगी कि मुख्य न्यायाधिपति संघ और राज्यों के बीच व्यय के समायोजन के सम्बन्ध में निर्णय करने के लिए एक ही व्यक्ति को नियुक्त करे। इसकी सम्भावना नहीं है कि पेचीदे मामले उठेंगे और न इन मामलों में अंतर्ग्रस्त पक्षों में अधिक उत्तेजना होगी। किन्तु मैं डॉ. अम्बेडकर से एक प्रश्न पूछना चाहता हूं और वह यह है कि क्या ऐसे मामले नहीं उठेंगे जिनमें एक ओर संघ और दूसरी ओर एक से अधिक राज्य अंतर्ग्रस्त हों अथवा एक ओर एक राज्य और दूसरी ओर एक से अधिक राज्य अंतर्ग्रस्त हों और इनके बीच समायोजन और मध्यस्थता की आवश्यकता हो। अनुच्छेद 267 में संघ और एक राज्य के बीच ही मध्यस्थता करने के सम्बन्ध में उपबन्ध है। किसी स्थल पर भी राज्य शब्द बहुवचन में नहीं प्रयोग हुआ है और दो राज्यों के बीच जो मामले उठ खड़े हों उनके सम्बन्ध में निर्णय करने के बारे में भी कोई उपबन्ध नहीं है। मेरे विचार से इस अनुच्छेद का इस प्रकार निर्वचन नहीं किया जा सकता कि इसमें प्रयुक्त एकवचन बहुवचन-अर्थक भी है। मेरे विचार से अधिक ध्यान न देने के कारण यह कमी रह गई है अथवा जानबूझकर इस प्रकार का आशय रखा गया है। मैं इस सम्बन्ध में सन्देह-मुक्त होना चाहता हूं कि क्या यह बिल्कुल असम्भव है कि दो राज्यों के बीच व्यय के वितरण के सम्बन्ध में कोई मामले उठ खड़े हों। मैं यह नहीं मानता कि इसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती क्योंकि विभिन्न प्रकार के मामलों का उल्लेख है। पहली कण्डिका इस प्रकार है:

> "जहां इस संविधान के उपबन्धों के अधीन किसी न्यायालय या आयोग के व्यय, अथवा जिस व्यक्ति ने इस संविधान के प्रारम्भ से पूर्व भारत में सम्राट के अधीन सेवा की है उसको या उसके बारे में देय निवृत्ति-वेतन भारत के राजस्व अथवा राज्य के राजस्व पर भारित हैं, इत्यादि।"

मेरा यह कहना है कि यह एक से अधिक राज्यों के लिये भी प्रयुक्त हो सकता है और यदि आशय यही है तो क्या यह उद्देश्य नहीं है कि ऐसे मामले मध्यस्थ के सामने रखे जायें? यदि उन्हें मध्यस्थ के सामने रखना है तो इस अनुच्छेद

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

में यथोचित संशोधन करना होगा। सम्भवत: जहां कहीं 'राज्य' शब्द एकवचन में प्रयुक्त है वहां हमें उसके स्थान पर बहुवचन प्रयोग करना पड़े। इस समय मैं केवल यह चाहता हूं कि इसका स्पष्टीकरण किया जाये। यदि डॉ. अम्बेडकर का यह विश्वास हो कि विभिन्न राज्यों के बीच अथवा एक ओर संघ और दूसरी ओर दो राज्यों के बीच इस प्रकार के मामले उठ ही नहीं सकते हैं तो मैंने जो प्रश्न पूछा है वह नहीं उठता। किन्तु यदि ऐसे मामलों के उठने की सम्भावना है तो तद्विषयक एक उपबन्ध की भी आवश्यकता होगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं किसी भी संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूं।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधन संख्या 102 के भाग (1) के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये–

'(1) 'Crown in India' (भारत में सम्राट के अधीन) शब्दों के स्थान पर 'Government of India prior to 15th August 1947 or after such commencement in connection with the affairs of the Union or the Government of a State' (15 अगस्त 1947 के पूर्व भारत सरकार के अधीन अथवा ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् संघ के या किसी राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में) शब्द रखे जायें।'"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के भाग (1) में, अनुच्छेद 267 में, 'in connection with the affairs of the Union or of a State' (संघ या किसी राज्य कार्यों के सम्बन्ध में) प्रस्तावित शब्दों के स्थान पर 'Under the Government of the Union or of a State' (संघ की अथवा किसी राज्य की सरकार के अधीन) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 267 के खण्ड (क) में 'in connection with the affairs of such a State' (राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में) शब्दों के स्थान पर

'Under the Government of such a State' (राज्य की सरकार के अधीन) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 267 के खण्ड (ख) में 'in connection with the affairs of the Union or another such State' (संघ या अन्य राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में) शब्दों के स्थान पर 'Under the Government of the Union or another such State' (संघ या अन्य राज्य की सरकार के अधीन) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 102 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 267 में, 'an arbitrator' (कोई मध्यस्थ) शब्दों के स्थान पर 'a tribunal' (कोई न्यायाधिकरण) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 267 में—

(1) 'Crown in India' (भारत में सम्राट के अधीन) शब्दों के बाद 'or after such commencement in connection with the affairs of the Union or of a State' (अथवा ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् संघ के या किसी राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में) शब्द प्रविष्ट किये जायें;

(2) 'revenues of India' (भारत का राजस्व) शब्द जहां कहीं आये हों उनके स्थान पर 'Consolidated Fund of India' (भारत की संचित निधि) शब्द रखे जायें;

(3) 'revenues of a State' (किसी राज्य का राजस्व) शब्द जहां कहीं आये हों उनके स्थान पर 'Consolidated Fund of a State' (किसी राज्य की संचित निधि) शब्द रखे जायें;

(4) 'for the time being specified in part I of First Schedule' (इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित) शब्द और अंक निकाल दिये जायें; और

(5) 'revenues of a State' (राज्य का राजस्व) शब्दों के स्थान पर 'Consolidated Fund of the State' (राज्य की संचित निधि) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 267, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 267, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 268

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 268 को उठाते हैं। डॉ. अम्बेडकर के नाम से एक रस्मी संशोधन है। मैं यह समझता हूं कि सभा उसे स्वीकार करती है। संशोधन इस प्रकार है:

"अनुच्छेद 268 में, 'revenues of India' (भारत का राजस्व) शब्दों के स्थान पर 'Consolidated Fund of India' (भारत की संचित निधि) शब्द रखे जायें।"

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** अध्यक्ष महोदय, मैं सभा का ध्यान इस अध्याय के महत्वपूर्ण विषय की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। यह अध्याय उधार लेने के सम्बन्ध में है। यद्यपि केन्द्र तथा प्रान्तों द्वारा उधार लेने और संघ सरकार द्वारा राज्यों को उधार देने का विषय अनुच्छेद 268 और 269 में संक्षेप में वर्णित है किन्तु यह विषय कर लगाने की शक्तियों के विषय से अधिक महत्वपूर्ण है और इन अनुच्छेदों की अधिक सावधानी से परीक्षा करने की आवश्यकता है, भले ही हमने कर लगाने और कर से प्राप्त धन-राशि के वितरण के सम्बन्ध में अर्थात संघ और राज्यों के राजस्व के सम्बन्ध में एक लम्बा अध्याय रखा है। सभा का ध्यान इस ओर आकर्षित करने के लिये ही मैं इस समय बोलना चाहता हूं ताकि आगे चलकर संसद इस विषय पर अधिक ध्यानपूर्वक विचार कर सके। हमने समय-समय पर यह देखा है कि किसी वर्ष का राजस्व वित्त-विधेयकों के आधार पर संगृहीत किया जाता है। जहां तक उधार लेने का सम्बन्ध है; उधार थोड़े समय के लिए लिया जा सकता है अथवा लम्बे समय के लिये, जिससे वर्तमान पीढ़ी पर ही भार नहीं पड़ता है बल्कि आने वाली पीढ़ी को भी इस भार को वहन करना पड़ता है। किन्तु जिस प्रणाली के अनुसार उधार लिया जाना चाहिये उसकी

ओर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया जा रहा है। प्रान्तीय सरकारों ने अभी हाल में कई धन-राशियों के ऋण मांगे किन्तु अभी तक उन्हें इतना धन उधार नहीं मिला है कि उन राशियों को पूरा किया जा सके। कुछ उधारों की घोषणाओं को तो वापस लेना पड़ा। खुले बाजार में भी हम बड़े संकोच से ऋण मांगते रहे हैं। मेरा यह सुझाव है कि इसके लिए वित्त-आयोग के समान एक आयोग स्थापित किया जाये और वह हमेशा के लिये एक स्थायी आयोग हो।

किसी नये आयोग को स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है। रिजर्व बैंक राज्य का बैंक होगा और वह हमें इस विषय के सम्बन्ध में बता सकता है कि क्या किया जाना चाहिये और क्या नहीं किया जाना चाहिये। सामान्यत: विकास-योजनाओं को ऋण लेकर ही कार्यान्वित किया जाता है। उनका भार चालू राजस्व पर न डालना चाहिये क्योंकि इन योजनाओं से वर्तमान पीढ़ी को ही लाभ न होगा बल्कि आने वाली पीढ़ियों को भी होगा। देश के हाल के आय व्ययकों से यह स्पष्ट हो जायेगा कि उधार लेने के कार्यक्रम उतने ही विस्तृत हैं जितने विस्तृत वार्षिक राजस्व के कार्यक्रम हैं। इस कारण उधार लेने का विषय और यह प्रश्न कि कितनी धनराशि उधार की जाये संसद के समक्ष नहीं रखा जा रहा है। भारत सरकार के वर्तमान अधिनियम में इसी प्रकार का एक उपबन्ध है। उपनिवेश की संसद को इसकी स्वतन्त्रता है कि वह उधार लेने की प्रणाली और उधार ली जाने वाली धन-राशि तथा अन्य बातों के सम्बन्ध में निदेश दे। किन्तु हमारे सामने ये सब बातें एक परिशिष्ट के रूप में ही रखी जाती रही हैं और आय-व्ययक के अन्त में केवल यह दिखा दिया जाता है कि कितनी धनराशि की आवश्यकता है और संक्षेप में यह बताया जाता है कि यह धनराशि किस प्रकार संगृहीत की जायेगी। संसद को उधार ली जाने वाली विभिन्न धनराशियों के लिये आज्ञा देने के सम्बन्ध में बड़ी सावधानी से उपबन्ध रखने चाहियें, भले ही लोग धन उधार देने के लिए सक्षम हों। संसद अनुच्छेद 268 के अधीन इन सब बातों का तथा जिन कार्यों के लिए उधार लिया जा रहा हो उनका नियमन करेगी।

मैं यह देखता हूं कि अनुच्छेद 268 में तथा अनुच्छेद 269 में भी यह उपबंधित है कि प्रान्तों के उधार लेने के सम्बन्ध में कुछ मामलों में केन्द्रीय सरकार की सहमति आवश्यक है। भारत सरकार के वर्तमान अधिनियम में इस आशय का एक खण्ड है कि सहमति प्रदान करने में अकारण देर न की जाये। इस अनुच्छेद में इस प्रकार का कोई उपबन्ध नहीं है क्योंकि यह समझा गया है कि इस प्रकार का उपबन्ध अनावश्यक है। भारत सरकार के अधिनियम के अधीन यह उपबन्ध रखते समय यह विचार किया गया था कि देश का प्रशासन देशवासियों के हाथ में न होगा बल्कि अन्य लोगों के हाथ में होगा। किन्तु अब प्रान्तों में राष्ट्रीय सरकारें शासनारूढ़ हैं और केन्द्र में भी राष्ट्रीय सरकार के हाथ में शासन की बागडोर है। इसलिये अब यह अनुभव किया जाता है कि इस प्रकार के उपबन्ध की आवश्यकता नहीं रह गई है। मुझे आशा है कि जो आवश्यकतायें हैं उनकी पूर्ति अनुच्छेद 268 और अनुच्छेद 269 से हो जायेगी। उनसे पूरा फायदा उठाया जायेगा और उनसे संघ के तथा प्रान्तों के राजस्व की सावधानी से परीक्षा करने में सहायता मिलेगी। जिस रूप में ये अनुच्छेद उपस्थित किये गये हैं उसी रूप में मैं उनका समर्थन करता हूं। किन्तु मुझे आशा है कि व्यवहार में इस विषय

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

को संसद के समक्ष रखा जायेगा और कार्यपालिका भविष्य में बिना पहले संसद के समक्ष इस विषय को रखे हुए उधार लेने के पूरे उत्तरदायित्व को स्वयं स्वीकार न कर लेगी।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद द्वारा भारत के राजस्व आदि की प्रतिभूति पर कार्यपालिका को जो शक्ति प्रदान की जा रही है उसके विरुद्ध भी मैं अपनी भावना व्यक्त कर देना चाहता हूं। इसमें कोई संदेह नहीं कि संसद विधि द्वारा सीमाओं को निश्चित करेगी। किन्तु इसके अतिरिक्त संसद और कुछ नहीं करेगी। श्रीमान्, मेरे विचार से ऐसे महत्वपूर्ण विषयों के सम्बन्ध में सारे राज्य की साख को गिरवी रख देना उचित नहीं है। इस सम्बन्ध में संसद को भी कुछ कहने का अधिकार होना चाहिये। यह न होना चाहिये कि संसद तो केवल सीमा निश्चित करे और इसके अतिरिक्त अन्य मामलों के सम्बन्ध में कार्यपालिका को पूर्ण शक्ति प्राप्त हो। कम से कम अपना निर्णय करने के पश्चात् कार्यपालिका को संसद का विश्वास प्राप्त कर लेना चाहिये। आखिर विधान-मण्डल में मंत्रिमण्डल का बहुमत तो होगा ही और वह जो कुछ करेगा उसका सभा समर्थन करेगी ही। इस दशा में मेरी समझ में नहीं आता कि वह इन बातों को संसद के सामने रखने में संकोच क्यों कर रही है। इसलिये मेरे विचार से इस अनुच्छेद में प्रस्तावित विस्तृत शक्तियों को कार्यपालिका को न देना चाहिये। श्रीमान्, मुझे यही आपत्ति करनी है और मुझे आशा है कि सभा उस पर विचार करेगी। मुझे इस का खेद है कि मैं इस सम्बन्ध में किसी संशोधन की सूचना न दे सका।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मुझे आशा है कि सभा इस अध्याय पर अर्थात् अध्याय 2 पर गम्भीरता से विचार करेगी। यह अध्याय संघ द्वारा ऋण लेने तथा संघ के एककों द्वारा ऋण ली हुई धनराशियों के सम्बन्ध में प्रत्याभूति देने के सम्बन्ध में है। ऋण ली हुई धनराशियों की चट्टान एक ऐसी चट्टान है जिस पर राज्य की नौका टकरा कर डांवांडोल हो सकती है। आधुनिक काल में और आधुनिक जगत में जब अर्थ-शास्त्र का महत्व बहुत बढ़ गया है और संसार का प्रत्येक राज्य और देश प्राय: ऋण लेता है और ऋण देता है, मेरे विचार से भारत के भावी संघ की कार्यपालिका को ऋण लेने के सम्बन्ध में निर्णय करने की शक्ति न दी जानी चाहिये चाहे वह संसद द्वारा निश्चित की हुई सीमा के अन्दर ही ऋण क्यों न ले सके और चाहे ऋण लेने का उद्देश्य कुछ भी क्यों न हो। मेरी यह धारणा है कि इस अनुच्छेद के अधीन संसद को यह सूचित किया जायेगा कि ऋण किस उद्देश्य से लिया जा रहा है और ऋण लेने के पूर्व संसद की स्वीकृति प्राप्त की जायेगी। किन्तु इस अनुच्छेद की अर्थात अनुच्छेद 268 की शब्दावली के अनुसार संसद को केवल सीमायें निश्चित करने की शक्ति प्राप्त है। मुझे आशा है कि ये सीमायें धनराशि के सम्बन्ध में होंगी अर्थात् यह कहा जा सकेगा कि इतने करोड़ के अन्दर ऋण लिया जाये, इत्यादि। अनुच्छेद का दूसरा भाग भी इसी प्रकार के रक्षाकवचों के सम्बन्ध में है और उसमें भी संघ द्वारा ऋण लेने के लिए दी हुई प्रत्याभूति की धन सीमाओं का उल्लेख है यद्यपि मेरे विचार से ये बातें महत्वपूर्ण नहीं है। अनुच्छेद में किसी स्थल पर भी इसका उल्लेख नहीं है कि किन उद्देश्यों के लिये धन ऋण लिया जाये और प्रत्याभूति दी जाये। सभा को विदित है कि पिछले कुछ महीनों में वर्ल्ड बैंक

से अथवा अमरीका से अथवा किसी ऐसे अन्य देश से धन उधार लेने के प्रस्ताव किये गये हैं जो हमारे आर्थिक तथा औद्योगिक विकास की योजनाओं को कार्यान्वित करने के हेतु धन देने के लिये तैयार हो। सभा को यह भी स्मरण होगा कि इस सभा ने संसद के रूप में समवेत होकर पिछले आयव्ययक सत्र में और पहले के सत्रों में भी प्रधान मंत्री महोदय से और सम्भवत: वित्त मंत्री महोदय से भी यह पूछा था कि यदि सरकार इस प्रस्ताव पर विचार करे और अमरीका तथा रूस के समान अन्य देशों से ऋण लिया जाये तो उसके फलस्वरूप हमारा देश कहीं राजनैतिक, आर्थिक अथवा सैनिक बन्धनों में तो नहीं पड़ जायेगा। मुझे विश्वास है कि अन्त में संसद ही अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के बारे में निर्णय करेगी। भविष्य में हमारे वैदेशिक सम्बन्ध कैसे होंगे और हमारी अन्तर्राष्ट्रीय नीति किस प्रकार की होगी इसका निर्णय कार्यपालिका अथवा राष्ट्रपति नहीं करेंगे बल्कि संसद ही करेगी। यदि कार्यपालिका का संसद से कुछ मामलों में मतभेद हो और यदि कार्यपालिका किसी ऐसी वैदेशिक नीति का अनुसरण करने के लिए तुल जाये जिस का संसद आगे चल कर अनुमोदन न करे अथवा जो संसद के तद्विषयक निर्णयों के अनुरूप न हो तो एक बहुत ही बुरी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जिसका भयंकर परिणाम होगा क्योंकि तत्कालीन सरकार, अर्थात् राष्ट्रपति और कार्यपालिका, विदेशों से ऋण लेने के सम्बन्ध में करार कर चुकेगी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह संसद की निश्चित की हुई सीमाओं का उल्लंघन न करेंगे। वह एक करोड़ अथवा दस या बीस करोड़ अथवा जो भी सीमा निश्चित की गई हो उससे अधिक ऋण न लेगी। किन्तु जिस उद्देश्य से ऋण लिया जायेगा उसे गुप्त रखा जा सकता है। यह एक महत्वपूर्ण विषय है कि किस उद्देश्य से ऋण लिया जायेगा क्योंकि उसी से आगे चलकर हमें सहायता मिल सकती है अथवा हमारे मार्ग में बाधा पड़ सकती है अथवा हमारी रक्षा हो सकती है या हम विनष्ट हो सकते हैं। संसद की सीमायें निश्चित करने से मेरे विचार से यह विषय कहीं अधिक सारपूर्ण है और मुझे आशा है कि सभा इस विषय के इस अंग पर विचार करेगी। ऋण किस उद्देश्य से लिया जायेगा यह एक आधारभूत प्रश्न है। यदि राष्ट्रपति अथवा कार्यपालिका अमरीका से ऋण लेते समय कोई ऐसा गुप्त करार करे जिसमें राजनीतिक मामलों के सम्बन्ध में अथवा सेना के सम्बन्ध में भविष्य में युद्ध छिड़ने पर प्रभाव में आने वाला कोई वचन दिया गया हो तो उससे उस देश को अन्य देशों के विरुद्ध कार्यवाही करने में सहायता मिल सकती है। क्या हम ऐसी भयंकर स्थिति उत्पन्न होने देना चाहते हैं? इसलिये मैं यह चाहता हूं कि इस अनुच्छेद को इस प्रकार संशोधित कर देना चाहिये कि संसद केवल ऋण लेने और प्रत्याभूति देने की सीमायें ही निश्चित न कर सके बल्कि यह भी देख सके कि ऋण ठीक उद्देश्य से लिया जा रहा है और प्रत्याभूति भी ठीक उद्देश्य से दी जा रही है और स्थिति को ध्यान में रखते हुए उसकी आवश्यकता है और यह कि वह संसद द्वारा स्वीकृत अन्तर्देशीय तथा विशेषत: वैदेशिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय नीति के अनुरूप है। यदि कार्यपालिका संसद द्वारा स्वीकृत अथवा आगे चलकर स्वीकृत होने वाली नीति के विरुद्ध किन्हीं शर्तों पर ऋण लेगी तो संसद और कार्यपालिका के बीच कलह हो सकता है। किन्तु कार्यपालिका बिना संसद से पूछे हुये जो वचन दे चुकेगी और उन वचनों के आधार पर जो धन उधार ले चुकेगी उसके कुप्रभाव को उस समय निराकृत न किया जा सकेगा। भविष्य में जो स्थिति उत्पन्न हो सकती है उसके सम्बन्ध में हमें सावधान रहना चाहिये। मैं सभा से यह निवेदन करता हूं कि यह कोई ऐसा साधारण विषय नहीं है जिसके सम्बन्ध में हम मोटी तौर से

[श्री एच.वी. कामत]

विचार करके निर्णय कर लें और वह केवल इस कारण कि डॉ. अम्बेडकर अथवा मसौदा-समिति इस पर विचार करने के लिए तैयार नहीं है। मैं भारत के भविष्य को ध्यान में रखते हुये और भारत की तथा संसार की शांति, स्वतन्त्रता और समुन्नति को ध्यान में रखते हुए, जिनसे हम सब को प्रेम है यह अनुरोध करता हूं कि इस सभा को इस अनुच्छेद पर तथा इस पूरे अध्याय पर, अन्य अनुच्छेदों पर साधारणतया जिस प्रकार विचार किया जाता है उसकी अपेक्षा अधिक विचार करना चाहिये। मुझे आशा है कि संसद का अनुमोदन केवल इस सम्बन्ध में प्राप्त न किया जायेगा कि किस सीमा तक धन उधार लिया जा रहा है बल्कि इस सम्बन्ध में भी प्राप्त किया जायेगा कि किस उद्देश्य से धन उधार लिया जा रहा है और संसद जिस अन्तर्देशीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय नीति को निर्धारित करेगी उसी के अनुरूप राष्ट्रपति कार्य करेगा।

***प्रो. के.टी. शाह:** अध्यक्ष महोदय, मुझे यह मत मान्य है कि ऋण लेने के सम्बन्ध में प्रत्येक कार्यपालिका का कार्य है। किन्तु संसद द्वारा निर्धारित की हुई सीमाओं के अन्दर ऋण लेने की शक्ति को कार्यपालिका शक्ति नहीं कहा जा सकता है। इस दृष्टि से मैं यह कहना चाहता हूं कि ऋण लेने का विषय एक महत्वपूर्ण विषय है और राष्ट्रीय प्रतिभूति को प्रयोग में लाने का प्रश्न एक नाजुक प्रश्न है। वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखते हुए तथा वर्तमान पीढ़ी के ही नहीं बल्कि आने वाली पीढ़ियों के हितों को भी ध्यान में रखते हुऐ इस प्रश्न पर जितनी सावधानी से विचार किया जाये उतना कम है। हम यह जानते हैं कि जिस भारत-राजस्व का इस खण्ड में उल्लेख है उसकी प्रतिभूति, कम से कम आर्थिक दृष्टिकोण से, एक साधारण प्रतिभूति है। लगभग दस वर्षों से हमारी आर्थिक स्थिति बराबर गिरी हुई रही है और हमारे आयव्ययक तथा राष्ट्रीय वित्त में जो घाटा रहा है उसमें कमी होने के कोई चिन्ह नहीं दिखाई देते। हम कई योजनाओं को प्रयोग में लाये हैं और उनके आधार पर हम यह आशा कर सकते हैं कि दस या पन्द्रह वर्ष के अन्दर यह कमी पूरी हो जायेगी। किन्तु चूंकि मुझे यह दिखाई देता है कि चूंकि हमारी आर्थिक स्थिति गिरी हुई है इसलिये इस समय और कुछ वर्षों तक हमें अवश्य ही ऋण लेना पड़ेगा और हम इस शक्ति को सावधानी से निगमित, सीमित अथवा निर्बन्धित न कर सकेंगे।

इस दृष्टि से, मेरे विचार से, यदि संविधान में यह शक्ति निश्चित रूप से कार्यपालिका को दे दी गई तो उससे अन्याय होगा और केवल विधान-मण्डल के लिये ही अन्याय न होगा किन्तु, जैसाकि मैं कह चुका हूं, आने वाली पीढ़ियों के हितों के प्रति भी अन्याय होगा। इस कारण संसद को ऋण लेने की सीमायें निश्चित करके और प्रतिभूति अथवा प्रत्याभूति देने की शर्तें निर्धारित करके कार्यपालिका की ऋण लेने की शक्ति का नियमन ही न करना चाहिये बल्कि उसे, मेरे विचार से, प्रत्येक वर्ष 'उपाय तथा साधन अधिनियम' द्वारा अथवा वित्त अधिनियम द्वारा यह भी व्यक्त कर देना चाहिये कि कितना धन उधार लिया जायेगा ताकि उसे समय समय पर तथा प्रत्येक वर्ष यह सूचना प्राप्त होती रहे कि कितना राष्ट्रीय ऋण है और वह उसके लिये व्यवस्था कर सके। जहां तक मैं समझ पाया हूं, यह प्रश्न इससे भी भयंकर है क्योंकि सम्भव है कि देश से ही ऋण लेने से काम न चले और बाहर से भी ऋण लेना पड़े। आज हम जैसी स्थिति समझे हुए हैं उससे वह स्थिति कहीं अधिक संकटापन्न होगी। कई ऐसे देशों का,

जो हमेशा ऋणी रहे हैं, यह कटु अनुभव रहा है कि ऋणदाता उन पर समय-समय पर प्रभाव डालता रहा है और ऐसी प्रतिभूति अथवा प्रत्याभूति की मांग करता रहा है जो उनके सामर्थ्य के बाहर थी। मैं बहुत पहले का कोई उदाहरण नहीं देना चाहता। एक ऐसा देश भी, जो किसी समय संसार का साहूकार था, अब ऐसी स्थिति में है कि उसकी साख पर सन्देह प्रकट किया जाता है। मेरा मतलब इंग्लिस्तान से है। आज संसार का मुख्य साहूकार उसके घरेलू मामलों में हस्तक्षेप करने का आग्रह कर रहा है और इस प्रकार की प्रवृत्ति दिखा रहा है। यह कहा जाता है कि इंग्लिस्तान की वर्तमान सरकार धीरे-धीरे पूर्ण राष्ट्रीयकरण की जिस नीति का अनुसरण कर रही है उससे ऋणदाता को उस देश की सुस्थिर स्थिति अथवा प्रतिभूति पर विश्वास नहीं कर रहा है। इसी कारण कई लोगों की यह सम्मति है कि इंग्लिस्तान और अमरीका के सम्बन्ध बिगड़ सकते हैं।

मैंने यह उदाहरण केवल यह स्पष्ट करने के लिए दिया है कि एक ऐसे उपबन्ध से संकटापन्न स्थिति उत्पन्न हो सकती है, जिसके अधीन बिना किसी शर्त के ऋण लेने की शक्ति कार्य पालिका को दे दी जाती है और यदि कोई शर्त रखी जाती है तो वह यह है कि संसद ऋण की धनराशि और समय-समय पर दी जाने वाली प्रत्याभूतियों के सम्बन्ध में सीमायें निश्चित कर सकती है। इस अनुच्छेद की शब्दावली ऐसी है कि इन सीमाओं को निर्धारित करने के सम्बन्ध में भी सन्देह प्रकट किया जा सकता है। "सीमाओं के भीतर, यदि कोई हो" शब्दों का अर्थ यह है कि सीमायें नहीं भी हो सकती हैं और कार्यपालिका बिना किसी सीमा के भीतर रहते हुए भी ऋण ले सकती है और उसे संचित निधि पर भारित कर सकती है।, जिस पर संसद प्रतिवर्ष मत नहीं दे सकेगी। वह ऋण इतना अधिक भी हो सकता है कि देश का भविष्य ही ऋणदाता को रहने के रूप में समर्पित किया जा सकता है।

इस कारण मेरा हृदय भविष्य के सम्बन्ध में आशंकित हो उठता है। मैं इसके लिये तैयार नहीं हूं कि संविधान में कोई ऐसा उपबन्ध रखा जाये जिसके अधीन कार्यपालिका को जिस सीमा तक वह चाहे उस सीमा तक बिना किसी शर्त के देश में या विदेश में लेने की असीम शक्ति प्राप्त हो जाये। सभा को यह विदित ही है कि मैं पहले भी कार्यपालिका की अपेक्षा संसद को अधिक शक्ति प्रदान करने के पक्ष में तर्क उपस्थित करता रहा हूं। इस सम्बन्ध में मैं यहां तक कहने के लिये तैयार हूं कि राष्ट्रीय साख के मामले में संविधान में संसद की शक्ति को भी निर्बन्धित करने के बारे में एक उपबन्ध होना चाहिये। कार्यपालिका की शक्ति केवल निर्बन्धित ही न करनी चाहिये किन्तु उसे केवल उस अधिनियम को प्रवर्तन में लाने का कार्य सौंपना चाहिये जिसके अधीन प्रत्येक वर्ष ऋण लेने के लिए प्राधिकार प्रदान किया जाये। इससे संसद प्रत्येक वर्ष स्थिति पर विचार कर सकेगी। मैं यहां तक कहता हूं कि संसद की आश्वासन तथा प्रत्याभूति देने की शक्ति भी निर्बन्धित होनी चाहिये। उदाहरणार्थ संसद को उत्पादन के आधार भूत साधनों, जैसे खनिज पदार्थ और नदियों के सम्बन्ध में, जिन पर देश की भावी समृद्धि निर्भर है, प्रत्याभूति देने अथवा उन्हें रहने-रखने की शक्ति प्राप्त न होनी चाहिये। यदि इस सभा को इस प्रकार का उपबन्ध रखना है तो मेरा यह सुझाव है कि इसकी सूचना जनसाधारण को दी जाये क्योंकि संसद द्वारा भी देश के साधनों को रहने-रखने के पूर्व संविधान में परिवर्तन करने की आवश्यकता हो सकती है।

[प्रो. के.टी. शाह]

जैसाकि मैं पहले कह चुका हूं, और हमेशा कहते आया हूं, सर्वोच्च शक्ति संसद को प्राप्त होनी चाहिये किन्तु देश में और विशेषत: विदेशों में ऋण लेने के सम्बन्ध में मैं संसद की शक्ति को भी सीमित करना चाहता हूं। इसलिये इस अनुच्छेद पर जितनी गम्भीरता से विचार किया जाये उतना कम हैं। मैं आशा करता हूं कि मसौदाकार यह समझते हैं कि इस अनुच्छेद के फलस्वरूप कितनी गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो सकती है और मैं उनसे अनुरोध करता हूं कि वे इस पर विचार करें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मेरे मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह ने अन्त में जो भाषण दिया और जिसमें उन्होंने कहा कि हमें एक ऐसा खण्ड समाविष्ट करना चाहिये जिससे ऋण के लिये मंजूरी देने के सम्बन्ध में संसद का प्राधिकार सीमित हो सके, मैं अनुच्छेद 268 के उपबन्धों के बारे में अन्य वक्ताओं के मतभेद को बिल्कुल नहीं समझ पाया। यह स्वीकार किया गया है कि ऋण लेने के सम्बन्ध में कार्यपालिका ही देश की साख के आधार पर वचन दे सकती है क्योंकि इस प्रश्न का एक अंग यह भी है कि ऋण लेने का काम कार्यपालिका का है किन्तु इस अनुच्छेद में यह प्रस्ताव नहीं रखा गया है कि कार्यपालिका की ऋण लेने की शक्ति किसी संसद निर्मित विधि से निर्बन्धित न होगी। इस अनुच्छेद में यह स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि कार्यपालिका की ऋण लेने की शक्ति ऐसी सीमाओं के अन्दर होगी जिन्हें संसद विधि द्वारा नियत करे। यदि संसद कोई विधि नहीं बनायेगी तो संसद का ही दोष होगा, किन्तु मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता कि कोई भावी संसद इस विषय पर गम्भीरता से विचार नहीं करेगी और इसके सम्बन्ध में कोई विधि नहीं बनायेगी। मैं यह भी कहता हूं कि अनुच्छेद 268 के अधीन संसद एक वार्षिक ऋण-अधिनियम को भी बनायेगी जिससे किसी वर्ष में ऋण लेने की कार्यपालिका की शक्ति निर्धारित की जा सकेगी अथवा सीमित की जा सकेगी। इसलिये मैं यह नहीं समझ पाया कि अनुच्छेद 268 के उपबन्धों के बारे में मतभेद प्रकट करने वाले लोगों को और क्या चाहिये। यह दूसरी बात है कि हम इस पर विचार करें कि देश की साख के आधार पर संसद की वचन देने की शक्ति को सीमित करने के बारे में हमें कोई उपबन्ध रखना चाहिये क्योंकि उसे यह कहने की स्वतन्त्रता होगी, कि देश के कुछ साधनों को रहेन रख कर ऋण न लिया जा सकेगा। मेरी समझ में नहीं आता कि ऋणों के सम्बन्ध में प्रत्याभूति देने की अपनी शक्ति को सीमित करने में इस अनुच्छेद से संसद के लिये क्या रुकावट है। इसलिये मेरा यह विचार है कि सभी आकस्मिकताओं का सामना करने के लिए यह अनुच्छेद, वर्तमान रूप में पर्याप्त है और जैसाकि मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर कह चुके हैं, हम यह आशा करते हैं, और मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी संदेह नहीं है, कि संसद इस विषय पर गम्भीरता से विचार करेगी और ऐसी विधियों को बनाती रहेगी जिनसे संघ की ऋण लेने की शक्ति सीमित होगी। मैं यह भी कहता हूं कि मैं यह आशा ही नहीं करता हूं बल्कि यह विश्वास भी रखता हूं कि इस अनुच्छेद के अधीन संसद को जिन कर्तव्यों का पालन करना है उनका वह अवश्य पालन करेगी।

*__श्री एच.वी. कामतः__ क्या डॉ. अम्बेडकर "यदि कोई हों" शब्दों को निकाल देने के लिये सहमत नहीं हैं?

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः__ मैं इस पर विचार कर रहा था किन्तु मेरे विचार से इससे कोई लाभ न होगा क्योंकि "जिन्हें संसद समय-समय पर" शब्द भी प्रयुक्त हैं।

*__अध्यक्षः__ मैं समझता हूं कि 'भारत की संचित निधि' शब्दों को रखने के सम्बन्ध में जो संशोधन है वह स्वीकार कर लिया गया है।

प्रस्ताव यह है:

"अनुच्छेद 268 में, 'revenues of India' (भारत का राजस्व) शब्दों के स्थान पर 'Consolidated Fund of India' (भारत की संचित निधि) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 268, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 268, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 269

*__अध्यक्षः__ कुछ संशोधन छपे हुए संशोधनों के अंक 2 के पृष्ठ 313 में दिये हुए हैं।

(संशोधन संख्या 2971 और 2972 उपस्थित नहीं किये गये।)

तब हम संशोधन संख्या 107 को उठाते हैं जो डॉ. अम्बेडकर के नाम से है।

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः__ श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 269 के खण्ड (1) में से 'for the time being specified in Part-I of the First Schedule' (इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित) शब्द और अंक निकाल दिये जायें।"

"अनुच्छेद 269 के खण्ड (1) में 'revenues of the State' (राज्य के राजस्व) शब्दों के स्थान पर 'Consolidated Fund of the State' (राज्य की संचित निधि) शब्द रखे जायें।"

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2972 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 269 के खण्ड (2) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखा जाये:

'(2) The Government of India may, subject to such conditions as may be laid down by or under any law made by Parliament, make loans to any State or, so long as any limits fixed under article 268 of this Constitution

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

are not exceeded, give guarantees in respect of loans raised by any State and any sums required for the purpose of making such loans shall be charged on the Consolidated Fund of India.' "

[(2) भारत सरकार ऐसी शर्तों के साथ जैसी कि संसद द्वारा निर्मित किसी विधि के द्वारा या अधीन रखी जायें, किसी राज्य को उधार दे सकेगी, अथवा जहां तक इस संविधान के अनुच्छेद 268 के अनुसार नियत किन्हीं सीमाओं का उल्लंघन न होता हो वहां तक ऐसे किसी राज्य के द्वारा लिये गये उधारों के बारे में प्रत्याभूति दे सकेगी तथा, जो राशियां ऐसे उधार देने के प्रयोजन के लिये आवश्यक हों, वे भारत की संचित निधि पर भारित होंगी।]

मेरे संशोधन 107 द्वारा केवल यह महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया है कि जहां पहले इस मामले के सम्बन्ध में भारत सरकार को पूरी स्वतन्त्रता दी गई थी वहां अब भारत सरकार कुछ ऐसी शर्तों के अधीन कार्य कर सकेगी जिन्हें संसद किसी विधि द्वारा या किसी विधि के अधीन निर्धारित करेगी।

श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 269 के खण्ड (3) में से 'for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule' (इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 अथवा भाग 3 में उल्लिखित) शब्द और अंक निकाल दिये जायें।"

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं संशोधन संख्या 107 को उपस्थित नहीं कर रहा हूं।

***श्री एच.वी. कामत:** संशोधन संख्या 146 मेरे विचार से एक शाब्दिक संशोधन है और मैं यह चाहता हूं कि उस पर मसौदा-समिति ही विचार करे।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, अनुच्छेद 268 द्वारा संसद को यह शक्ति दी गई है कि वह विधि द्वारा उन धन-राशियों को निश्चित करे जिन्हें प्रान्तीय सरकारें उधार ले सकती हैं। अनुच्छेद 269 का मसौदा पहले भिन्न था। अब डॉ. अम्बेडकर ने अनुच्छेद 269 के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किये हैं उनके फलस्वरूप संघ सरकार के वित्त-मंत्री पर और भी अधिक भार पड़ जाता है। उनके फलस्वरूप भारत सरकार के महा-लेखापरीक्षक पर भी अधिक भार पड़ जाता है क्योंकि बिना उसकी मन्त्रणा के संसद निर्णय न कर सकेगी।

इस समय संघ सरकार पर राज्यों के ऋणों का भी उत्तरदायित्व है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह भी कहा गया है कि इस प्रकार के ऋण भारत राज्य-क्षेत्र के भीतर लिये जायेंगे और राज्य के राजस्व की प्रतिभूति पर लिये जायेंगे। श्रीमान्, यदि हम विभिन्न प्रान्तीय सरकारों के वित्त की परीक्षा करें तो हमें यह विदित हो जायेगा कि उस कुछ करोड़ रुपये के ऋण के अतिरिक्त, जो 1936 में कांग्रेस के प्रान्तों के प्रशासन को अपने हाथ में लेने पर लिया गया था, अन्य सभी ऋण भारत सरकार की प्रतिभूति पर लिये गये हैं और आगे चलकर इस भार को संघ सरकार को उठाना होगा। हमने हाल में यह चर्चा भी सुनी कि कुछ प्रान्तों का यह विचार है कि वे जितना धन चाहें उधार ले सकते हैं। कुछ प्रान्तों ने विद्रोहात्मक भावनायें प्रकट की और यह कहा कि वे जितना भी ऋण चाहें ले सकते हैं और किसी प्रकार की हुण्डियां अथवा प्रतिभूतियां भी दे सकते हैं चाहे वे संक्रमणीय हों अथवा असंक्रमणीय। हम में से जिन लोगों की यह धारणा है कि सभी ऋण संघ सरकार की प्रतिभूति पर लिये जायें उन्होंने उस समय यह अनुभव किया कि यदि ऋण लेने के सम्बन्ध में प्रान्तों को स्वतन्त्रता दी गई तो संघ सरकार की साख की हानि होगी। यह मेरी समझ में नहीं आता कि प्रान्तीय सरकारों के राजस्व की साख क्या है। उसे कौन निश्चित करेगा? क्या संविधान के प्रवर्तन में आने पर महालेखापरीक्षक यह निश्चित करेगा कि अमुक राज्यों तथा प्रान्तों को उधार लेने की अमुक शक्ति प्राप्त होगी?

दुर्भाग्य से मुझे अनुच्छेद 268 की शब्दावली नापसंद है। संसद विधि द्वारा संघ के लिये तथा विभिन्न प्रान्तों के लिये प्रत्येक वर्ष उधार ली जाने वाली राशियों को कैसे निश्चित करेगी? श्रीमान्, जहां तक मुझे स्मरण है, पिछले पच्चीस वर्षों में इस देश पर शासन करने वाली विदेशी सरकार ने किसी अवसर पर भी अपनी ऋण लेने की नीति के सम्बन्ध में संसद से परामर्श नहीं किया। उसे व्याख्यात्मक ज्ञापन के रूप में अप्रत्यक्ष रूप से बताया जाता था। भारत सरकार ने कभी भी अपनी ऋण लेने की नीति पर वाद-विवाद करने की प्रथा को नहीं चलाया। जब आय-व्ययक पारित होता है तो उसके साथ ही ऋण लेने की नीति के लिये भी मंजूरी दे दी जाती है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 269 के अधीन राज्यों के वित्त मंत्री अपने प्रदेशों के विकास के उद्देश्य से धन-राशियों की मांग कर सकते हैं। अनुच्छेद 269 के उपबन्धों के अधीन वे जितने भी धन की मांग करना चाहे कर सकते हैं। वह धन राज्य के राजस्व पर भारित होगा। किन्तु इसका निर्णय कौन करेगा कि कोई प्रान्त ऋण चुकाने के लिए सक्षम है या नहीं? भारत सरकार प्रान्तों की सरकारों की ओर से इस समय भी बड़ी-बड़ी विकास-योजनाओं के सम्बन्ध में वचनबद्ध है। पूर्वी पंजाब में भाखड़ा बांध और उड़ीसा में हीराकुण्ड बांध बनने जा रहा है तथा बंगाल में दामोदर घाटी निगम स्थापित किया गया है और बिहार में कोसी बांध बनने जा रहा है, जिसकी मेरे बिहार के मित्रों को बहुत चिन्ता है। इसका निर्णय कौन करेगा कि इन विकास योजनाओं के लिये जो धन उधार लिया गया है उसके लिये इन प्रान्तों की साख पर्याप्त है या नहीं? मैं यह चाहता हूं कि इसका निर्णय कोई न कोई व्यक्ति करे। श्रीमान्, चाहे हम अनुच्छेद 268 और अनुच्छेद 269 में जिस प्रकार के भी उपबन्ध रखें किन्तु हम इस भार का संसद पर ही न डालें। मैं यह कह सकता हूं कि पिछले पच्चीस वर्षों से संसद ऋण के प्रश्न की ओर बहुत कम ध्यान देती रही है। जहां तक मुझे स्मरण है, पिछले पच्चीस वर्षों में ऋण लेने की नीति पर केवल छः बार सम्भवतः वाद-विवाद हुआ होगा। क्या आने वाले कुछ ही वर्षों में संघ की तथा

[श्री बी. दास]

प्रान्तों की साख पर विचार-विमर्श करके हम अपने वित्तीय ज्ञान में वृद्धि कर लेंगे? यह निश्चित रूप से कौन कह सकेगा कि अमुक-अमुक प्रान्तों को इतने करोड़ रुपये से अधिक ऋण नहीं दिया जायेगा? दुर्भाग्य से जब इन विषयों पर विचार होते समय प्रान्तीय भावनायें प्रबल हो उठती हैं तो सदस्य अपने-अपने प्रान्तों को अधिक लाभ प्राप्त कराने के लिये लड़ने लगते हैं। मेरे विचार से अनुच्छेद 268 और अनुच्छेद 269 का आशय यह है कि महा-लेखापरीक्षक को अधिक शक्तियां प्रदान की जायेंगी। महा-लेखापरीक्षक पुनर्विलोकन करेगा और प्रत्येक वर्ष संघ सरकार को छोड़कर प्रत्येक प्रान्त की साख के सम्बन्ध में संसद के सदस्यों के सम्मुख एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगा। महा-लेखापरीक्षक इस समय यह कार्य नहीं करता है। मैं यह बता रहा हूं कि इस प्रकार के प्रश्नों पर विचार करने में हमारे सामने कौन सी कठिनाइयां उपस्थित हो सकती हैं। दुर्भाग्य से भारत सरकार का वित्त-विभाग अब भी पहले के ही रास्ते पर चल रहा है और महा-लेखापरीक्षक को केवल एक समवाय के लेखापरीक्षक के समान समझता है जिसमें निदेशक उससे यह कहते रहते हैं कि वह त्रुटियों और कुप्रथाओं की ओर ध्यान न दे। यदि सभा अनुच्छेद 269 को उसके वर्तमान रूप में स्वीकार करती है तो उसे उसमें कोई ऐसा उपबन्ध रख देना चाहिये जिसके अधीन महा-लेखापरीक्षक प्रान्तों की साख के सम्बन्ध में संसद के सामने अवश्य ही एक प्रतिवेदन रखे। हम में से अधिकांश लोग राजनीतिज्ञ हैं और इस विषय का ज्ञान नहीं रखते। जिस जनतंत्र के युग ने हमें जन्म दिया है वह वित्त-विशेषज्ञों को जन्म नहीं देता। भावी विधान-मण्डलों में न वाणिज्यिक होंगे और न ऐसे लोग होंगे जिन्हें श्रेष्ठि चत्वर अथवा हमारे देश की वित्तीय साख के बारे में जानकारी होगी। इस प्रकार अनुच्छेद 269 से संसद के कर्तव्य दूने हो जाते हैं। मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर से यह पूछता हूं कि वे यह कैसे कहते हैं कि संसद प्रत्येक राज्य की तथा संघ की साख की बातें समझ सकेगी और संघ सरकार अथवा राज्यों द्वारा उधार लिये जाने वाले धन की राशियों को सीमित कर सकेगी। अनुच्छेद 268 के अधीन संसद को भारत की साख को बनाये रखने की शक्ति प्राप्त है और अनुच्छेद 269 के अधीन इस सम्बन्ध में और भी अधिक शक्ति प्राप्त होने जा रही है। किन्तु भारत की साख बनी कैसे रहेगी? मुझे अनुच्छेद 269 से बहुत आशंका है। यदि कोई प्रान्त केन्द्र के विरुद्ध और भारतीय राष्ट्र के एकीकरण के विरुद्ध विद्रोह करेगा तो राष्ट्र की साख बनी नहीं रहेगी। उसे बनाये रखने के लिए किसी अन्य उपाय पर विचार करने की आवश्यकता है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, प्रोफेसर शाह जब अनुच्छेद 268 पर बोल रहे थे तो मेरे हृदय में एक प्रश्न उठा और उसी के सम्बन्ध में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। प्रोफेसर शाह ने यह सुझाव उपस्थित किया कि भारत सरकार को और संसद को भी ऋण लेने के लिये देश के आधारभूत साधनों को रेहन रखने का अधिकार न होना चाहिये। मैं उनके सुझाव से पूर्णतया सहमत हूं। किन्तु जहां तक मैं अनुच्छेद 268 और 269 के आशय को समझ पाया हूं, उनके अधीन यह प्रश्न ही नहीं उठता कि किसी ऋण को लेने के लिए भारत सरकार अथवा कोई राज्य किसी विशेष साधन को रेहन रखे। भारत सरकार को यह कहने की स्वतन्त्रता न होगी कि अमेरिका से ऋण लेने के लिये वह इस देश की रेलों को रेहन रखती है। केवल भारत की पूरी संचित

निधि की ही प्रतिभूति दी जा सकेगी। इसका अर्थ यह है कि वह भारत के लोगों की साख की एक साधारण प्रतिभूति होगी। देश के अन्दर से या बाहर से ऋण लेने के लिये किसी विशेष साधन अथवा रेलों को रेहन रखने का प्रश्न ही नहीं उठता। यही प्रत्येक राज्य के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है। इसलिये इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की आशंका न होनी चाहिये। मेरे विचार से अनुच्छेद 268 और अनुच्छेद 269 का सीधा-सादा अर्थ लगाने से यह स्पष्ट हो जायेगा। किन्तु मैं डॉ. अम्बेडकर के सामने यह सुझाव रखता हूं कि यदि उनकी शब्दावली से कुछ भी सन्देह प्रकट होता है तो वे उसे मसौदा-समिति से दूर करवा लें। यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिये कि किसी विशेष साधन की प्रतिभूति न दी जायेगी बल्कि सारे भारत की साख की अथवा किसी राज्य की साख की ही प्रतिभूति दी जायेगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मेरे विचार से किसी उत्तर की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 269 के खण्ड (1) में से 'for the time being specified in Part I of the First Schedule' (इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित) शब्द और अंक निकाल दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 269 के खण्ड (1) में 'revenues of the State' (राज्य के राजस्व) शब्दों के स्थान पर 'Consolidated Fund of the State' (राज्य की संचित निधि) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2972 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 269 के खण्ड (2) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखा जाये:

'(2) The Government of India may, subject to such conditions as may be laid down by or under any law made by Parliament, make loans to any State or, so long as any limits fixed under article 268 of this Constitution are not exceeded, give guarantees in respect of loans raised by any State, and any sums required for the purpose of making such loans shall be charged on the Consolidated Fund of India.' "

[(2) भारत सरकार ऐसी शर्तों के साथ, जैसी कि संसद द्वारा निर्मित किसी विधि के द्वारा या अधीन रखी जायें, किसी राज्य को उधार दे सकेगी, अथवा जहां तक इस संविधान के अनुच्छेद 268

[अध्यक्ष]

के अनुसार नियत किन्हीं सीमाओं का उल्लंघन न होता तो वहां तक ऐसे किसी राज्य के द्वारा लिये गये उधारों के बारे में प्रत्याभूति दे सकेगी तथा, जो राशियां ऐसे उधार देने के प्रयोजन के लिये आवश्यक हों, वे भारत की संचित निधि पर भारित होंगी।]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 269 के खण्ड (3) में से 'for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule' (इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 अथवा भाग 3 में उल्लिखित) शब्द और अंक निकाल दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 269, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 269, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 5 और 6

*__अध्यक्षः__ अब हमें मूल मसौदे के 5 और 6 अनुच्छेदों को उठाना है। मैं यह देखता हूं कि संशोधनों का एक अरण्य उपस्थित है। इन दो अनुच्छेदों के सम्बन्ध में लगभग 130 या 140 संशोधनों की सूचना दी गई है। मेरे विचार से उचित यह होगा कि डॉ. अम्बेडकर इन अनुच्छेदों के अपने तैयार किये हुए अंतिम मसौदे को प्रस्तुत करें और फिर मैं इस संशोधित मसौदे के सम्बन्ध में जो संशोधन होंगे उन्हें उठाऊंगा। मेरे विचार से 5 और 6 दोनों अनुच्छेदों को एक साथ उठाया जा सकता है। डॉ. अम्बेडकर।

*__प्रो. के.टी. शाहः__ क्या मैं यह जान सकता हूं कि छपी हुई सूची के संशोधनों का क्या होगा? वे सब मूल मसौदे के सम्बन्ध में हैं। संशोधनों पर विचार करने के लिए आपने जो सुझाव प्रस्तुत किया है उसे मैं नहीं समझ पाया हूं।

*__अध्यक्षः__ यदि कोई सारवान संशोधन हुआ और वह मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तुत संशोधित मसौदों में स्थान पा सकता हो तो मैं उसे अवश्य ही उठाऊंगा। किन्तु मैं यह चाहता हूं कि सदस्य मुझे बतायें कि वे किस संशोधन को उपस्थित करना चाहते हैं।

*__डॉ. पी.एस. देशमुखः__ यदि मूल मसौदा उपस्थित न किया गया तो उसके सम्बन्ध में सभी संशोधनों का निराकरण हो जाता है।

*अध्यक्षः हम मूल-मसौदे को उपस्थित नहीं कर रहे हैं किन्तु यह मान लिया जायेगा कि वह उपस्थित हो चुका है। तभी अन्य संशोधन उपस्थित किये जा सकते हैं।

सदस्य देखेंगे कि डॉ. अम्बेडकर ने कुछ संशोधनों की सूचना दी है। वे सदस्यों के पास भेजे जा चुके हैं। पहला संशोधन सूची 1 का संशोधन संख्या 1 है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः श्रीमान्, क्या मैं संशोधनों की ओर संकेत कर सकता हूं? नागरिकता विषयक खण्ड के बारे में जिन संशोधनों की सूचना दी गई है वे विभिन्न सूचियों में छपे हुये हैं। आरम्भ में मैं सदस्यों का ध्यान उन सूचियों की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। पहला संशोधन सूची 1 का संशोधन संख्या 1 है। इसके बाद सूची 4 के संशोधन संख्या 128, 129, 130, 131, 132 और 133 आते हैं। इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में मसौदा-समिति के यही विभिन्न प्रस्ताव हैं। यदि इन संशोधनों को एक-एक करके अलग-अलग उपस्थित किया गया तो मेरे विचार से सभा उन्हें स्पष्टतः और पूर्णतः नहीं समझ पायेगी। इसलिये मैं एक सम्मिलित संशोधन उपस्थित करना चाहता हूं जिसमें संशोधन संख्या 1, 128, 129, 130 और 133 समाविष्ट होंगे। इसके पश्चात् मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी अन्य दो संशोधनों को अर्थात सूची 4 के संशोधन संख्या 131 और 132 को उपस्थित करेंगे। संशोधन संख्या 129 में "प्रस्तावित अनुच्छेद 5-क के" शब्दों के स्थान पर "प्रस्तावित अनुच्छेद 5 के" शब्द होने चाहियें। यह छापे की त्रुटि है। इस प्रारम्भिक व्याख्या के साथ मैं अपने संशोधन को उपस्थित करता हूं:

"अनुच्छेद 5 और 6 के स्थान पर निम्नलिखित अनुच्छेद रखे जायें:

Citizenship at the date of commencement of this Constitution.

5. At the date of commencement of this Constitution, every person who has his domicile in the terriroty of India and–

(a) who was born in the territory of India; or

(b) either of whose parents was born in the territory of India; or

(c) who has been ordinarily resident in the terriroty of India for not less than five years immediately preceeding the date of such commencement,

shall be a citizen of India provided that he has not voluntarily acquired the citizenship of any foreign State.

Rights of citizenship of certain persons who have migrated to India from Pakistan.

5-A. Notwithstanding anything contained in article 5 of this Constitution, a person who has migrated to the territory of India from the territory now included in Pakistan shall be deemed to be a citizen of India at the date of

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

commencement of this Constitution if—

(a) he or either of his parents or any of his grand-parents was born in India as defined in the Government of India Act, 1935 (as originally enacted); and

(b) (i) in the case where such person has so migrated before the nineteenth day of July 1948, he has ordinarily resided within the territory of India since the date of his migration, and

(ii) in the case where such person has so migrated on or after the nineteenth day of July 1948, he has been registered as a citizen of India by an officer appointed in this behalf by the Government of the Dominion of India on an application made by him therefor to such officer before the date of commencement of this Constitution in the form prescribed for the purpose by that Government:

Provided that no such registration shall be made unless the person making the application has resided in the territory of India for at least six months before the date of his application.

Rights of citizenship of certain migrants of Pakistan.

5-AA. Notwithstanding anything contained in articles 5 and 5-A of this Constitution a person who has after the first day of March 1947, migrated from the territory of India to the territory now included in Pakistan shall not be deemed to be a citizen of India:

Provided that nothing in this article shall apply to a person who, after having so migrated to the territory now included in Pakistan has returned to the territory of India under a permit for resettlement or permanent return issued by or under the authority of any law and every such person shall for the purposes of clause (b) of article 5-A of this Constitution be deemed to have migrated to the territory of India after the nineteenth day of July 1948.' "

[5. इस संविधान के प्रारम्भ की तारीख पर प्रत्येक व्यक्ति जिसका भारत राज्य क्षेत्र में अधिवास है, तथा

इस संविधान के प्रारंभ की तारीख पर नागरिकता

(क) जो भारत राज्य-क्षेत्र में जन्मा था; अथवा

(ख) जिसके जनकों में से कोई भारत-राज्य क्षेत्र में जन्मा था; अथवा

(ग) जो ऐसे आरम्भ की तारीख से ठीक पहिले कम से कम पांच वर्ष तक भारत राज्य-क्षेत्र में सामान्यतया निवासी रहा है, भारत का नागरिक होगा, परन्तु उसने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वयं अवाप्त न की होनी चाहिये।

5-क. अनुच्छेद 5 में किसी बात के होते हुए भी कोई व्यक्ति जो पाकिस्तान के इस समय अन्तर्गत राज्य-क्षेत्र से भारत राज्य-क्षेत्र को प्रव्रजन कर आया है इस संविधान के प्रारम्भ की तारीख पर भारत का नागरिक समझा जायेगा–

पाकिस्तान से भारत को प्रव्रजन कर आये कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार

(क) यदि वह अथवा उसके जनकों में से कोई अथवा उसके महाजनकों में से कोई भारत सरकार के अधिनियम 1935 (यथामूलतः अधिनियमित) में परिभाषित भारत में जन्मा था; तथा

(ख) (i) जबकि वह व्यक्ति ऐसा है जो सन् 1948 की जुलाई के उन्नीसवें दिन से पूर्व प्रव्रजन कर आया है तब यदि वह अपने प्रव्रजन की तारीख से भारत राज्य-क्षेत्र में सामान्यतया निवासी रहा है; अथवा

(ख) (ii) जबकि वह व्यक्ति ऐसा है जो सन् 1948 की जुलाई के उन्नीसवें दिन या उसके पश्चात् इस प्रकार प्रव्रजन कर आया है तब यदि वह भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा विहत प्रपत्र पर और रीति से नागरिकता प्राप्ति के आवेदन-पत्र के अपने द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ की तारीख से पहले ऐसे पदाधिकारी को, जिसे उस सरकार ने इस प्रयोजन के लिये नियुक्त किया है, दिये जाने पर उस पदाधिकारी द्वारा भारत का नागरिक पंजीबद्ध कर लिया गया है:

परन्तु यदि कोई व्यक्ति अपने आवेदन पत्र की तारीख से ठीक पहले कम से कम छह महीने भारत राज्य-क्षेत्र का निवासी न रहा हो तो वह इस प्रकार पंजीबद्ध नहीं किया जायेगा।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

पाकिस्तान को प्रव्रजन करने वालों नागरिकता के अधिकार

5-कक. इस संविधान के अनुच्छेद 5 और 5 (क) में किसी बात के होते हुए भी जो व्यक्ति 1947 के मार्च के पहले दिन के पश्चात् भारत राज्य-क्षेत्र से पाकिस्तान के इस समय अन्तर्गत राज्य-क्षेत्र को प्रव्रजन कर गया है, वह भारत का नागरिक नहीं समझा जायेगा:

परन्तु इस अनुच्छेद की कोई बात ऐसे व्यक्ति पर लागू नहीं होगी जो पाकिस्तान के इस समय अन्तर्गत राज्य-क्षेत्र को प्रव्रजन के पश्चात् भारत राज्य-क्षेत्र को ऐसी अनुज्ञा के अधीन लौट आया है जो पुनर्वास के लिये या स्थायी रूप से लौटने के लिये किसी विधि के द्वारा या अधीन दी गई है, तथा प्रत्येक ऐसा व्यक्ति इस संविधान के अनुच्छेद 5 (क) के खण्ड (ख) के प्रयोजनों के लिये भारत राज्य-क्षेत्र को 1948 की जुलाई के 19वें दिन के पश्चात् प्रव्रजन करने वाला समझा जायेगा।]

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): आपने यह कहा था कि इसे श्री टी.टी. कृष्णमाचारी उपस्थित करेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैंने उसे सम्मिलित अनुच्छेद में समाविष्ट कर लिया है क्योंकि वे जिस संशोधन को उपस्थित करने वाले हैं उसे मैं स्वीकार करना चाहता हूं।

Right of citizenship of certain persons of Indian origin residing outside India.

"5-B. Notwithstanding anything contained in articles 5 and 5-A of this Constitution, any person who or either of whose parents or any of whose grandparents was born in India as defined in the Government of India Act, 1935 (as originally enacted) and who is ordinarily residing in any territory outside India as so defined shall be deemed to be a citizen of India if he has been registered as a citizen of India by the diplomatic or consular representative of India in the country where he is for the time being residing on an application made by him therefore to such diplomatic or consular representative, whether before or after the commencement of this Constitution, in the form prescribed for the purpose by the Government of the Dominion of India or the Government of India.

Continuance of the rights of citizenship

5-C. Every person who is a citizen of India under any of the foregoing provisions of this Part shall, subject to the provisions of any law that may be made by Parliament, continue to be such citizen.

Parliament to regulate the right of citizenship by law.

6. Nothing in the foregoing provisions of this Part shall derogate from the power of Parliament to make any provision with respect to the acquisition and termination of citizenship and all other matters relating to citizenship.

भारत के बाहर रहने वाले भारतीय उद्भव के कुछ व्यक्तियों की नागरिकता के अधिकार

[5.(ख) इस संविधान के अनुच्छेद 5 और 5 (क) में किसी बात के होते हुए भी कोई व्यक्ति जो या जिसके जनकों में से कोई अथवा महाजनकों में से कोई भारत सरकार के अधिनियम 1935 (यथा मूलतः अधिनियमित) में परिभाषित भारत में जन्मा था, तथा जो सामान्यतया इस प्रकार परिभाषित भारत के बाहर किसी देश में रहता है, भारत का नागरिक समझा जायेगा, यदि वह भारत डोमीनियन सरकार द्वारा या भारत सरकार द्वारा विहित प्रपत्र पर और रीति से नागरिकता प्राप्ति के आवेदन पत्र के अपने द्वारा उस देश में, जहां वह तत्समय निवास कर रहा है, भारत के राजनीयिक या वाणिज्यिक प्रतिनिधियों को इस संविधान के प्रारम्भ से पहले या बाद, दिये जाने पर ऐसे राजनयिक या वाणिज्यिक प्रतिनिधि द्वारा भारत का नागरिक पंजीबद्ध कर लिया गया है।

नागरिकता के अधिकारों का बना रहना।

5. (ग) प्रत्येक व्यक्ति जो इस भाग के पूर्ववर्ती उपबन्धों में से किसी के अधीन भारत का नागरिक है, ऐसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, जो संसद द्वारा निर्मित की जाये, भारत का वैसा नागरिक बना रहेगा।

संसद विधि द्वारा नागरिकता अधिकार का विनियमन करेगी

6. इस भाग के पूर्ववर्ती उपबन्धों में की कोई बात नागरिकता के अर्जन और समाप्ति के तथा नागरिकता से सम्बद्ध अन्य सब विषयों के बारे में उपबन्ध बनाने की संसद की शक्ति का अल्पीकरण नहीं करेगी।]

श्रीमान्, जब श्री टी.टी. कृष्णमाचारी मेरे मसौदे के सम्बन्ध में अपने संशोधनों को उपस्थित कर चुकेंगे और मसौदा पूरा हो जायेगा तभी मैं उसके सम्बन्ध में बोलूंगा।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमद__ (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): श्रीमान्, जो संशोधन उपस्थित किया गया है वह छपे हुए संशोधनों में से कई संशोधनों को लेकर तथा जल्दी में उनका एकीकरण करके उपस्थित किया गया है। यद्यपि मैंने बहुत समय तक वकालत की है किन्तु मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि कई संशोधनों का एकीकरण किस प्रकार किया जा सकता है और मैं कह नहीं सकता कि इससे कार्यविधि का खण्डन हुआ है या नहीं। बहुत से संशोधनों का एकीकरण करने में तथा उनका मसौदा फिर से तैयार करने में प्रायः अनजाने कार्य विधि का खण्डन हो जाता है। चाहे हमारे संशोधनों को सम्मिलित मसौदे में स्थान दिया जाये या न दिया जाये, अथवा चाहे उन्हें उसी रूप में उपस्थित किया जाये या परिवर्तित रूप से उपस्थित किया जाये किन्तु हमें स्वयं उन पर विचार करने में कठिनाई होगी।

मेरा यह निवेदन है कि सूची 1 में संशोधन संख्या 1 में और अन्य सूचियों के कुछ अन्य संशोधनों में, जिनका अब एकीकरण किया गया है, तथा संविधान के मसौदे के अनुच्छेदों में सारवान अन्तर है और जो तर्क मैं पहले एक बार उपस्थित कर चुका हूं वह इस प्रसंग में भी युक्तियुक्त हैं। जिन खण्डों को अनुच्छेद 5 और 6 के संशोधनों के रूप में उपस्थित किया जा रहा है वे वास्तव में नये खण्ड हैं जैसे कि प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 5(क), 5(ख) और (ग)। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 5(कक) के समान नवीन अनुच्छेद भी हैं और संशोधन संख्या 131 में एक नये परन्तुक को प्रविष्ट करने का प्रस्ताव है और संशोधन संख्या 130 बिल्कुल नवीन संशोधन है। संशोधन संख्या 133 में भी अनुच्छेद 6 का नवीन मसौदा प्रस्तुत किया गया है। श्रीमान् मेरा यह निवेदन है कि ये संशोधन अथवा यह सम्मिलित संशोधन संविधान के संशोधन के समान ही है अथवा यह कहा जा सकता है कि संविधान में बहुत से संशोधनों को स्थान देने का प्रस्ताव है। जैसाकि मैंने पहले एक बार कहा था, आपने नियमित रूप से संशोधनों को भेजने की एक अवधि निश्चित की थी और बाद को आपने यह निर्णय किया था कि केवल संशोधनों पर संशोधन भेजे जायें और यह निर्णय प्रयोग में भी आया था। अब यह संशोधन अथवा सम्मिलित संशोधन उपस्थित किया गया है जिसमें कई संशोधन समाविष्ट किये गये हैं और जो वास्तव में संविधान का ही संशोधन हैं और इसके कारण बहुत सी कठिनाइयां पैदा हो गई हैं। हम प्रत्येक दिन संविधान के मसौदे से दूर हटते चले जा रहे हैं और आज तो उससे बहुत दूर हट गये हैं। मुझे आशा है कि मूल मसौदे से दूर हटने की भी एक सीमा होगी। श्रीमान्, मैं आपसे पूछता हूं कि क्या अब ऐसे संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा दी जा सकती है जिनके द्वारा बिल्कुल नये खण्ड प्रविष्ट होते हैं और जिनसे वास्तव में संविधान का ही संशोधन हो जाता है? यदि उन्हें उपस्थित करने की आज्ञा दी जाती है तो क्या यह उचित न होगा कि हमें एक सम्मिलित तथा संशोधित मसौदा दिया जाये ताकि हम उस पर विचार कर सकें और यह देख सकें कि उसमें हमारे संशोधन स्थान पा सकते हैं या नहीं, अथवा उनमें परिवर्तन करने की या मसौदे में ही संशोधन करने की आवश्यकता है या नहीं? श्रीमान्, मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि इस प्रक्रिया को व्यवहार में लाने में जो कठिनाइयां होंगी उन पर विचार किया जाये। कुछ समय से खण्ड 5 पर सभा विचार कर रही है और अब नियमित रूप से केवल संशोधनों पर संशोधन ही उपस्थित किये जा सकते हैं किन्तु प्रत्येक दिन नये संशोधनों को तथा नये विचारों को प्रस्तुत किया जा रहा है। अनुच्छेद 5(क), 5(ख) और 5(ग) नवीन अनुच्छेद हैं। अनुच्छेद

5 (कक) आज उपस्थित किया गया है और उसका परन्तुक एक भिन्न संशोधन द्वारा उपस्थित किया गया है। अनुच्छेद 5 में जो व्याख्या दी गई थी उसे आज निकाल दिया गया है। ये सब एक आशु संशोधन में सम्मिलित किये गये हैं। मैं यह चाहता हूं कि संविधान को यथासम्भव शीघ्रता से समाप्त कर देना चाहिये अन्यथा नये-नये परिवर्तनों को करने की चाह बढ़ती जायगी। श्रीमान्, मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि इस स्थिति का सामना करने के लिये किसी सुविधाजनक प्रणाली के सम्बन्ध में आप अपना निर्णय सुनायें।

*__अध्यक्ष:__ मुझे माननीय सदस्य महोदय की इस आपत्ति से बहुत सहानुभूति है कि इस संशोधन में नये विचारों का समावेश है किन्तु सदस्यों को स्मरण होगा कि जब जाड़े के सत्र में संविधान को वाद-विवाद के लिये उठाया गया था तो इन अनुच्छेदों के लिये स्थगित रखा गया था और मेरे विचार से यह स्वीकार किया गया था कि नये संशोधनों को उपस्थित किया जायेगा। ये सब अनुच्छेद और वे अनुच्छेद भी, जो उठाये गये थे पर जिन पर विचार नहीं हुआ था, स्थगित रखे गये थे और इस उद्देश्य से स्थगित रखे गये थे कि मसौदा-समिति मूल मसौदे पर विचार कर सके और जिस प्रसंग में भी आवश्यक हो नये मसौदों को उपस्थित कर सके।

मसौदा-समिति ने इसी दृष्टि से उस मसौदे पर विचार किया और अब नये मसौदों को प्रस्तुत किया है और अपने मसौदे के सम्बन्ध में भी कुछ संशोधन उपस्थित किये हैं। डॉ. अम्बेडकर ने केवल प्रस्तावित संशोधनों को एक साथ रख दिया है और सम्मिलित संशोधन को पढ़कर सुनाया है। किन्तु चूंकि ये संशोधन विभिन्न पृष्ठों और सूचियों में छपे हुए हैं, इसलिये मैं जानता हूं कि सदस्यों को कठिनाई हो सकती है। मैं कार्यालय से यह कहूंगा कि वह सदस्यों के पास डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित सम्मिलित संशोधन की प्रतियां भेजे। हम कल प्रात: डॉ. अम्बेडकर के उपस्थित किये हुए सम्मिलित संशोधन पर विचार-विमर्श आरम्भ कर सकते हैं और तब तक सदस्य महोदय संशोधनों का सम्मिलित रूप में अध्ययन कर सकते हैं। इस बीच हमारे पास अब जो आधे घण्टे का समय है उसे मैं व्यर्थ नहीं जाने देना चाहता। यदि सदस्यों को कोई और संशोधन उपस्थित करने हैं तो वे उन्हें आज उपस्थित कर सकते हैं ताकि हम कल प्रात: संशोधनों पर और डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत मसौदे पर विचार कर सकें।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:__ क्या हम डॉ. अम्बेडकर के भाषण को आज सुन सकते हैं?

*__अध्यक्ष:__ जी हां। मैं डॉ. अम्बेडकर से कहूंगा कि वे अपने संशोधन की व्याख्या करें।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:__ हमें संशोधन संख्या 130 और 131 को आज प्रात: ही दिया गया और हमें उन पर विचार करने का अवसर नहीं मिला। यदि सम्मिलित संशोधन को आज उपस्थित किया गया तो हम संशोधनों के सुझावों को प्रस्तुत न कर सकेंगे और उन्हें समय पर सभा के सामने न ला सकेंगे।

***अध्यक्षः** यदि इस कारण कोई वास्तविक कठिनाई हुई तो मैं उस पर विचार करूंगा।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** मैं सूची 4 का संशोधन संख्या 131 उपस्थित करता हूं। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"उपरोक्त संशोधन संख्या 130 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 5 (कक) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ दिया जायेः–

'Provided that nothing in this article shall apply to a person who, after having so migrated to the territory now included in Pakistan has returned to the territory of India under a permit for resettlement or permanent return issued by or under the authority of any law and every such person shall for the purposes of clause (b) of article 5-A of this Constitution be deemed to have migrated to the territory of India after the nineteenth day of July 1948.' "

[परन्तु इस अनुच्छेद की कोई बात ऐसे व्यक्ति पर लागू नहीं होगी जो पाकिस्तान के इस समय अन्तर्गत राज्य-क्षेत्र को प्रव्रजन के पश्चात् भारत राज्य-क्षेत्र को ऐसी अनुज्ञा के अधीन लौट आया है जो पुनर्वास के लिये या स्थायी रूप से लौटने के लिए किसी विधि के द्वारा या अधीन दी गई है, तथा प्रत्येक ऐसा व्यक्ति इस संविधान के अनुच्छेद 5(क) के खण्ड (ख) के प्रयोजनों के लिये भारत राज्य-क्षेत्र को 1948 की जुलाई के 19वें दिन के पश्चात् प्रव्रजन करने वाला समझा जायेगा।]

मुझे एक और रस्मी संशोधन को उपस्थित करना है। यह संशोधन संख्या 132 है। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (तृतीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित अनुच्छेद 5 (ख) से 'and subject to the provisions of any law made by Parliament' (और संसद निर्मित किसी विधि के उपबन्धों के अधीन) शब्द निकाल दिये जायें।"

श्रीमान्, मैं इन संशोधनों की व्याख्या नहीं करूंगा। यदि आवश्यकता हुई तो डॉ. अम्बेडकर उनकी व्याख्या करेंगे।

***श्री जसपतराय कपूरः** क्या मैं यह सुझाव रख सकता हूं कि सूची में जितने भी संशोधन हैं वे आज रस्मी तौर पर उपस्थित कर दिये जायें।

*****अध्यक्षः** पहले डॉ. अम्बेडकर अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट कर लें और उसके बाद अन्य संशोधन उपस्थित किये जायें।

***श्री जसपतराय कपूरः** मैं इस सुझाव को इसलिये उपस्थित कर रहा हूं कि यदि अन्य सभी संशोधन भी प्रस्तुत कर दिये जायेंगे तो डॉ. अम्बेडकर उन संशोधनों के सम्बन्ध में भी कुछ कह सकेंगे। अन्य संशोधन केवल उपस्थित ही किये जायें और उन पर भाषण न दिये जायें ताकि सभी संशोधन रस्मी तौर पर सभा में उपस्थित हो जायें।

*****अध्यक्षः** यदि हम अन्य सभी संशोधनों को उठायेंगे तो उनका अन्त ही न होगा। पहले डॉ. अम्बेडकर अपने प्रस्ताव की व्याख्या कर लें और फिर अन्य संशोधन उपस्थित किये जा सकते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, संविधान के एक अनुच्छेद के अतिरिक्त अन्य किसी अनुच्छेद से मसौदा-समिति को इतना सरदर्द नहीं हुआ है जितना इस अनुच्छेद से हुआ है। कितने ही मसौदे-तैयार किये गये और इस कारण रद्द कर दिये गये कि उनके अंतर्गत वे सब मामले न आ सकते थे, जिन्हें हम उनके अधीन लाना चाहते थे। यह मेरे विचार से एक सौभाग्य की बात है कि मसौदा-समिति ने एकमत से उस मसौदे को स्वीकार कर लिया जिसे मैं उपस्थित कर चुका हूं, और मेरी यह धारणा है कि इस मसौदे से यदि सब लोग नहीं तो अधिकांश लोग संतुष्ट ही हैं।

***एक माननीय सदस्यः** जरा पूछ कर देखिये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, इस अनुच्छेद में नागरिकता किसी सामान्य अर्थ में प्रयुक्त नहीं है। उससे वह नागरिकता अभिप्रेत है जो संविधान के प्रवर्तन में आने पर प्राप्त होगी। इस अनुच्छेद का उद्देश्य यह नहीं है कि इस देश की नागरिकता के सम्बन्ध में एक स्थायी विधि निर्धारित की जाये। नागरिकता के सम्बन्ध में स्थायी विधि का निर्माण करने का कार्य संसद को सौंपा गया है। मैं जिस अनुच्छेद 6 को उपस्थित कर चुका हूं, उसकी शब्दावली से सदस्यगण यह समझ सकते हैं कि संसद को इसकी स्वतन्त्रता दी गई है कि वह नागरिकता के सम्बन्ध में जैसी भी विधि उचित समझे बनाये। अनुच्छेद इस प्रकार है–

> "इस भाग के पूर्ववर्ती उपबन्धों में की कोई बात नागरिकता के अर्जन और समाप्ति के तथा नागरिकता से सम्बद्ध अन्य सब विषयों के बारे में उपबन्ध बनाने की संसद की शक्ति का अल्पीकरण नहीं करेगी।"

अनुच्छेद 6 का प्रभाव यह होगा कि संविधान के प्रवर्तन में आने पर जो लोग नागरिक घोषित किये जायें उनसे संसद अनुच्छेद 5 के तथा आगे के उपबन्धों के अधीन नागरिकता का अधिकार छीन ही नहीं सकती है बल्कि नये सिद्धांतों के आधार पर नई विधि का भी निर्माण कर सकती है। जो लोग इन अनुच्छेदों पर होने वाले वाद-विवाद में भाग लेंगे उन्हें इसे स्मरण रखना चाहिये। उन्हें यह न समझना चाहिये कि इस संविधान के प्रवर्तन में आने पर प्रयोग में आने वाली नागरिकता के सम्बन्ध में हम जिन उपबन्धों को रख रहे हैं वे स्थायी अथवा अपरिवर्तनीय हैं। हम केवल इस समय के लिये तदर्थ विनिश्चय कर रहे हैं।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

इन शब्दों के पश्चात् मैं सदस्यों का ध्यान इस ओर आकृष्ट करता हूं कि इस संविधान के प्रवर्तन में आने पर नागरिकता का अधिकार प्रदान करने के लिए मसौदा-समिति ने लोगों के पांच विभिन्न वर्गों के लिये उपबन्ध बनाये हैं और इस अनुच्छेद में उन शर्तों का भी उल्लेख किया है जिन्हें संविधान के प्रवर्तन में आने की तिथि को नागरिकता का अधिकार प्राप्त करने के लिए पूरा करना होगा। ये पांच वर्ग इस प्रकार हैं:

(1) वे लोग जिनका भारत में अधिवास है और जो भारत में जन्मे हैं, अर्थात् इस संविधान में वर्णित भारत के अधिकांश लोग।

(2) वे लोग जिनका भारत में अधिवास है किन्तु जो भारत में नहीं जन्मे हैं, यद्यपि वे भारत के निवासी हैं जैसे चन्द्रनगर और पुदुचेरी के समान भारत में फ्रांसीसी और पुर्तगाल की अस्तियों के लोग, अथवा ईरानी, जो फारस से आये हैं और, यद्यपि वे इस देश में नहीं जन्मे हैं, किन्तु उन्होंने बहुत काल से यहां निवास किया है और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि उनकी इच्छा यही है कि वे भारत के नागरिक हो जायें।

मसौदा-समिति जिन अन्य तीन वर्गों को इस अनुच्छेद की परिधि के अन्दर लाना चाहती हैं वे ये हैं:

(3) वे लोग जो भारत के निवासी हैं किन्तु जो पाकिस्तान को प्रव्रजन कर गये हैं;

(4) वे लोग जो पाकिस्तान के निवासी हैं किन्तु भारत को प्रव्रजन कर गये हैं; और

(5) वे लोग जिनका अथवा जिनके जनकों का जन्म भारत में हुआ था किन्तु जो भारत के बाहर निवास कर रहे हैं।

इस अनुच्छेद के उपबन्धों के अंतर्गत लोगों के यही पांच वर्ग आते हैं। लोगों के पहले वर्ग के बारे में अर्थात् उन लोगों के बारे में जिनका भारत राज्य-क्षेत्र में अधिकार है और जो भारत राज्य-क्षेत्र में जन्मे थे अथवा जिनके जनक भारत राज्य-क्षेत्र में जन्मे थे, अनुच्छेद 5 के खण्ड (क) और (ख) में उपबन्ध हैं। यदि वे उन उपबन्धों की शर्तें पूरा करते हैं तो वे नागरिक समझे जायेंगे।

दूसरे वर्ग के लोग जिनकी ओर मैंने संकेत किया, अर्थात् वे लोग जिन्होंने भारत में निवास किया है किन्तु जो भारत में नहीं जन्मे हैं अनुच्छेद 5 के खण्ड (ग) के अन्तर्गत आते हैं। इनका संविधान के प्रारम्भ के सद्य: पूर्व कम से कम पांच वर्ष तक भारत राज्य-क्षेत्र में निवास होना चाहिये। इन सब वर्गों के लोगों के लिये यह साधारण परिसीमा है कि इन्होंने स्वयं किसी विदेशी राज्य की नागरिकता प्राप्त न की होनी चाहिये।

अन्तिम वर्ग के सम्बन्ध में अर्थात् उन लोगों के सम्बन्ध में, जो भारत के बाहर निवास करते हैं किन्तु जिनका अथवा जिनके जनकों का भारत में जन्म हुआ था, अनुच्छेद 5 (ख) में उपबन्ध है। यह अनुच्छेद उन लोगों के सम्बन्ध में है जिनका अथवा जिनके जनकों का अथवा जिनके महाजनकों का जन्म भारत सरकार के 1935 के अधिनियम की परिभाषा के अनुसार भारत में हुआ था और जो साधारणतया भारत के बाहर किसी राज्य-क्षेत्र में निवास करते हैं और भारतीय कहे जाते हैं। उनके सम्बन्ध में केवल यह परिसीमा है कि यदि वे भारत के नागरिक होना चाहते हैं तो वे संविधान के प्रारम्भ के पूर्व भारत सरकार के वाणिज्यिक अधिकारी को अथवा राजनयिक प्रतिनिधि को भारत सरकार द्वारा निर्धारित प्रपत्र पर आवेदन-पत्र देंगे और अपने को भारत के नागरिकों के रूप में पंजीबद्ध करा लेंगे। उनके लिये दो शर्तें रखी गई हैं—एक यह है कि वे आवेदन पत्र देंगे और दूसरे यह है कि जहां वे रह रहे हों वहां के वाणिज्यिक अथवा राजनयिक प्रतिनिधि से अपने आवेदन-पत्र को पंजीबद्ध करायेंगे। जैसाकि मैं कह चुका हूं ये बहुत साधारण मामले हैं।

अब मैं उन लोगों के दो वर्गों को उठाऊंगा जो भारत के निवासी थे परन्तु पाकिस्तान को प्रव्रजन कर गये हैं अथवा जो पाकिस्तान के निवासी थे और भारत को प्रव्रजन कर आये हैं; जो लोग पाकिस्तान से भारत को प्रव्रजन कर आये हैं उनके सम्बन्ध में अनुच्छेद 5 (क) में उपबन्ध हैं। अनुच्छेद 5 (क) के उपबन्ध इस प्रकार हैं—

जो लोग पाकिस्तान से भारत चले आये हैं वे दो वर्गों में विभाजित किये गये हैं—

(क) जो लोग जुलाई 1948 के 19वें दिन से पहले चले आये हैं।

(ख) जो लोग जुलाई 1948 के 19वें दिन के बाद आये हैं।

जो लोग 19 जुलाई 1948 से पहले चले आये हैं वे स्वतः भारत के नागरिक हो जायेंगे।

इन लोगों को भी, जो 19 जुलाई, 1948 के पश्चात् आये हैं, संविधान की प्रारम्भ की तिथि पर नागरिकता का अधिकार होगा परन्तु उन्हें एक प्रक्रिया का अनुसरण करना होगा अर्थात् उन्हें भारत डोमीनियन सरकार द्वारा नियुक्त अधिकारी को आवेदन-पत्र देने होंगे और यदि वह अधिकारी उन लोगों को पंजीबद्ध कर दे तो उन्हें नागरिकता का अधिकार प्राप्त हो जायेगा।

पाकिस्तान से भारत आने वाले लोगों के सम्बन्ध में संविधान के प्रारम्भ पर उनको नागरिकता के अधिकार के बारे में निर्णय करने के लिये उन्हें दो वर्गों में विभाजित किया गया है—एक वर्ग उन लोगों का है जो 19 जुलाई, 1948 से पूर्व चले आये हैं और दूसरा वर्ग उन लोगों का है जो उस तिथि के पश्चात् आये हैं। जो लोग 19 जुलाई, 1948 से पूर्व चले आये हैं उन्हें नागरिकता का अधिकार स्वतः प्राप्त हो जायेगा। उनके सम्बन्ध में न कोई शर्तें रखी गई हैं और न कोई प्रक्रिया। जो लोग उस तिथि के पश्चात् आये हैं उन्हें एक प्रक्रिया का अनुसरण करना होगा और यदि वे उसकी सभी शर्तें पूरी करते हैं तो प्रस्तावित अनुच्छेद के अधीन उन्हें भी नागरिकता का अधिकार प्राप्त हो जायेगा।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

अब मैं उन लोगों के प्रश्न को उठाता हूं जो पाकिस्तान को प्रव्रजन कर गये थे किन्तु पाकिस्तान जाने के बाद भारत लौट आये हैं। यद्यपि मुझे इस प्रश्न के सम्बन्ध में उतनी जानकारी प्राप्त नहीं है जितनी कि इस विषय से सम्बंधित मंत्रियों को प्राप्त है, किन्तु हमारा यह प्रस्ताव है कि यदि कोई व्यक्ति पाकिस्तान को प्रव्रजन कर गया हो और वहां जाने के बाद भारत सरकार से अनुज्ञा लेकर भारत लौट आया हो और वह अनुज्ञा भारत में प्रवेश करने के सम्बन्ध में ही न हो बल्कि स्थायी रूप से वापिस होने और पुनर्वास के सम्बन्ध में भी हो, तो उसे संविधान के प्रवर्तन में आने पर भारत का नागरिक होने का अधिकार होगा। इस प्रकार के उपबन्ध को रखने की इसलिये आवश्यकता पड़ी कि भारत सरकार ने ऐसे लोगों को, जो भारत छोड़कर पाकिस्तान चले गये थे और बाद को पाकिस्तान से भारत चले आये थे, 'अनुज्ञा प्रणाली' के अधीन भारत में स्थायी रूप से बस जाने की आज्ञा दे दी थी। अनुज्ञा प्रणाली 19 जुलाई, 1948 से प्रयोग में आई। इस प्रकार अनुच्छेद 5 (ख) के उपबन्ध उन लोगों की नागरिकता के सम्बन्ध में हैं जो पाकिस्तान से चले आने के पश्चात् फिर पाकिस्तान चले गये थे और उसके पश्चात् भारत लौट आये हैं। उपबन्ध इस प्रकार है कि यदि कोई व्यक्ति पुनर्वास के लिये अथवा स्थायी रूप से लौट आने के लिए अनुज्ञा लेकर चला आया है तो केवल ऐसे ही व्यक्ति को संविधान के प्रवर्तन में आने पर नागरिकता का अधिकार प्राप्त होगा।

श्रीमान्, यह सम्भव नहीं है कि संविधान के प्रवर्तन में आने पर नागरिकता का अधिकार प्रदान करने के सम्बन्ध में प्रत्येक मामला इस अनुच्छेद के उपबन्धों के अधीन आ जाये। यदि किसी वर्ग के लोग इस संशोधन में समाविष्ट उपबन्धों के अन्तर्गत नहीं आते हैं तो संसद को यह शक्ति प्रदान की गई है कि वह उनके सम्बन्ध में उपबन्ध बनाये। मैं सभा को यह बताना चाहता हूं कि मैंने जिन संशोधनों को प्रस्तुत किया है वे हमारे उद्देश्य की पूर्ति के लिये तथा इस समय के लिये पर्याप्त हैं और मुझे आशा है कि सभा उन्हें स्वीकार कर लेगी।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई : जनरल): क्या अनुज्ञा प्रणाली 19 जुलाई 1948 से प्रयोग में आई थी?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जी हां, 19 जुलाई, 1948 को इस आशय का एक अध्यादेश पारित किया गया था कि कोई भी व्यक्ति बिना अनुज्ञा के भारत में प्रवेश न कर सकेगा और तदनुसार 19 जुलाई 1948 को ही भारत सरकार ने कुछ नियम बनाये थे जिनमें यह कहा गया था कि पाकिस्तान से भारत आने वाले किसी भी व्यक्ति को जो अनुज्ञा दी जाये उसमें इसका स्पष्ट उल्लेख हो कि उसे भारत आने का अधिकार है। अनुज्ञायें तीन प्रकार की हैं, अस्थायी अनुज्ञा, स्थायी अनुज्ञा और पुनर्वास तथा स्थायी रूप से लौट आने की अनुज्ञा। केवल अंतिम वर्ग के लोगों को पुनर्वास की तथा स्थायी रूप से लौटने की आज्ञा दी गई है। इस अनुच्छेद में केवल यही लोग सम्मिलित किये गये हैं, अन्य लोग नहीं।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से हम संशोधनों को कल उठायें। किन्तु सभा स्थगित करने के पूर्व मैं एक प्रश्न के सम्बन्ध में सभा का मत जानना चाहता हूं। अगले

सप्ताह सोमवार, 15 अगस्त, के दिन छुट्टी है और 17 तारीख बुधवार के दिन भी जन्माष्टमी की छुट्टी है। मेरे सामने यह सुझाव रखा गया है कि हम मंगलवार के दिन भी समवेत न हों ताकि सदस्यों को शनिवार से लेकर बुधवार तक लगातार चार-पांच दिन मिल जायें और मंगलवार के एवज में हम अगले शनिवार को समवेत हों। यदि सभा की यह इच्छा हो तो हम अपने कार्यक्रम को तदनुसार निश्चित कर सकते हैं।

माननीय सदस्य: जी हां।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** सभा के अधिक काल तक स्थगित रहने से सम्भव है हम सब कुछ भूल जायें।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से आपको फिर से अध्ययन करने का समय मिल जायेगा। अब सभा शुक्रवार तक समवेत होगी और तत्पश्चात बृहस्पतिवार के प्रात: नौ बजे तक के लिये स्थगित हो जायेगी और अगले शनिवार को भी समवेत होगी।

अब सभा कल प्रात: नौ बजे तक के लिए स्थगित की जाती है।

इसके पश्चात् सभा बृहस्पतिवार, 11 अगस्त, 1949 के नौ बजे तक के लिए स्थगित हो गई।
